अनुराग
बाल पत्रिका

त्रैमासिक
अक्टूबर-दिसम्बर, 2007
मूल्य : 10 रुपए

अक्टूबर-नवम्बर-दिसम्बर की कुछ महत्वपूर्ण तिथियाँ

22 अक्टूबर (1900)

शहीदे आज़म भगतसिंह के साथी व काकोरी काण्ड के शहीद अशफ़ाकउल्ला का जन्मदिवस।

26 अक्टूबर (1890)

अन्याय और जुल्म के ख़िलाफ़ संघर्षरत, भारतीय आज़ादी के प्रेणता तथा वाणी और कलम के सिपाही, गणेश शंकर विद्यार्थी का जन्मदिवस।

27 अक्टूबर (1904)

शहीद क्रान्तिकारी यतीन्द्र नाथ दास का जन्मदिवस।

7 नवम्बर (1917)

अक्टूबर क्रान्ति (रूसी क्रान्ति) दिवस। मानवता की मुक्ति का वह महत्वपूर्ण ऐतिहासिक दिवस जब आम जनता के अपने राज्य की स्थापना हुई थी। महान क्रान्तिकारी व्लादीमिर इल्लीच लेनिन के नेतृत्व में रूसी क्रान्ति सम्पन्न हुई थी और सोवियत संघ की स्थापना हुई थी।

13 नवम्बर

जनपक्षधर लेखक एवं कवि मुक्तिबोध का जन्मदिवस।

28 नवम्बर (1820) (मित्रता दिवस)

फ्रेडरिक एंगेल्स का जन्मदिवस। जनता के मुक्तिकामी दर्शन के प्रणेता, जर्मनी के राइन प्रान्त में जन्मे और कार्ल मार्क्स के अनन्य मित्र एवं सहयोगी। इनका जन्मदिवस पूरी दुनिया में मित्रता दिवस के रूप में मनाया जाता है।

17 दिसम्बर (1927)

काकोरी काण्ड के शहीद राजेन्द्र लाहिड़ी का शहादत दिवस।

19 दिसम्बर (1927)

काकोरी काण्ड शहादत दिवस। आज़ादी के इतिहास का वह काला दिन जब काकोरी काण्ड के तीन वीर सपूतों पं. रामप्रसाद बिस्मिल, अशफ़ाक उल्ला खाँ एवं रोशन सिंह को फाँसी दी गयी थी।

21 दिसम्बर (1879)

लेनिन के सहयोगी और सोवियत संघ के प्रमुख नेता जोसेफ स्तालिन का जन्मदिवस।

26 दिसम्बर (1893)

मानवता की मुक्ति के प्रतीक पुरुष एवं चीनी क्रान्ति के जनक माओ त्से-तुङ का जन्मदिवस।

अनुराग
बाल पत्रिका

त्रैमासिक, वर्ष 12, अंक 4
अक्टूबर-दिसम्बर 2007

सम्पादक
कमला पाण्डेय

सह सम्पादक
अभिनव सिन्हा

सज्जा
रामबाबू

स्वत्वाधिकारी कमला पाण्डेय के लिए यशकरण लाल द्वारा डी-68, निराला नगर, लखनऊ से प्रकाशित तथा मुद्रक बाबूराव बोरकर द्वारा शान्ति प्रेस, नयागाँव (पश्चिम), लखनऊ से मुद्रित।

सम्पादकीय कार्यालय
डी-68, निरालानगर
लखनऊ-226020
फोन : 0522-2786782

इस अंक का मूल्य : 10 रुपए
वार्षिक सदस्यता रुपए : 50
(डाक व्यय सहित)
आजीवन सदस्तया : 1000 रुपए

इस अंक में

संवाद

प्यारे बच्चो,

आखिर इक्कीसवीं सदी का सातवाँ वर्ष भी बीतने ही वाला है और तुम भी थोड़े और बड़े हो गये। तो यह बीतता हुआ वर्ष तुम बच्चों के लिए कैसा रहा? क्या तुमने कुछ सोचा है कि इस गुजरते हुए वर्ष में बच्चों ने क्या खोया, क्या पाया? यदि इस बीतते हुए वर्ष की तुम्हारे मन में कुछ खट्टी-मीठी यादें हों, तो जल्दी से लिख भेजो अपनी 'अनुराग' पत्रिका के लिए। और हाँ साथ में यह भी लिखना कि तुमने आने वाले वर्ष का स्वागत कैसे किया? इसको लेकर तुमने क्या-क्या सपने देखें? क्या-क्या संकल्प लिये?

बच्चो, विगत 9 दिसम्बर को हिन्दी के वरिष्ठ कवि त्रिलोचन हमारे बीच नहीं रहे। वे बच्चों को, प्रकृति और जनता को बहुत प्यार करते थे। उनकी कई कविताओं में बच्चे एक मजबूत चरित्र के रूप में उपस्थित रहे हैं। उन्हें याद करते हुए इस अंक में हम उनकी कुछ कविताएँ प्रस्तुत कर रहे हैं। त्रिलोचन आज भले ही हमारे बीच न हों लेकिन अपनी कविताओं के रूप में वे हमेशा हमारे बीच मौजूद रहेंगे और अपनी याद दिलाते रहेंगे।

तुम्हारे खट्टे-मीठे पत्रों का इंतजार रहेगा।

प्यार व शुभकामनाओं के साथ,

तुम्हारी नानी,
कमला पाण्डेय

पोस्ट बॉक्स

आदरणीय नानीजी

कविता (तोता) छापने के लिये धन्यवाद। इस बार आपको अपनी एक और कविता 'चिड़िया' छपने के लिये भेज रहा हूँ। कृपया इसे पत्रिका में प्रकाशित करने का प्रयत्न करें। एक बात और मैंने आपको विश्वविख्यात सोवियत रचनाकार 'अलेक्सई तोल्स्तोय' का जीवन-चरित्र आज से तीन-चार महीने पूर्व छापने के लिये भेजा था। कृपया इस लेख पर भी गौर करें। अगर इसमें कोई गलती हो तो मुझे बतायें ताकि अपने आगामी लेखों और कहानियों में मैं उसे सुधार सकूँ। इस तरह के जीवन परिचय मैं इसलिए लिखता हूँ ताकि हमारे देश की युवा पीढ़ी उन भूले बिसरे लेखकों से परिचित हो सके। सोवियत यूनियन के खात्मे के बाद से वहाँ के लेखक जिनसे एक समय में पूरी दुनिया परिचित थी आज वक्त के तूफान में कहीं गुम हो गये हैं। मेरी कलम ने मुझे वह ताकत दी है जिससे मैं अपने विचारों को लिपिबद्ध कर सकूँ लेकिन 'अनुराग' ने मुझे यह शक्ति प्रदान की है जिससे मैं अपने विचारों को आज की युवा पीढ़ी तक पहुँचा सकूँ।

एक बात और मैंने इण्टरनेट पर अपनी एक वेबसाइट शुरू की है। जिस पर मैं सोवियत संघ की उन पुस्तकों को जगह दे रहा हूँ जो अब आसानी से उपलब्ध नहीं हैं या लुप्तप्राय हैं। कृपया इस पर लॉगिन करें। इसमें निखार लाने के लिये आपके सुझावों की प्रतीक्षा में।

धन्यवाद,

विप्लव

दियांका-टॉमचिक

मध्य एशिया में दो बड़ी नदियों के बीच एक उर्वर फलता-फूलता पहाड़ है कजाख-इर दिजेनी शू। जिसका मतलब है सात नदियाँ। इन सात नदियों के किनारे पहाड़ है, जंगल है, हरी-भरी घाटियाँ हैं और बाग हैं। यह शहर, अपने बड़े सेबों के लिए खासकर जाना जाता है। यह आल्म-अता है, जिसका मतलब है "सेबों का पिता"।

'सेबों का पिता' समृद्ध व्यजंक रिपब्लिक की राजधानी है यह एक बड़ा सांस्कृतिक और औद्योगिक केन्द्र तुर्चशीन रेलमार्ग, इसे सोवियत संघ के बाकी बड़े शहरों से जोड़ता है। मास्को के दूर-दराज़ के इलाकों से नियमित रूप से रेलगाड़ियाँ अल्मा-अता के भव्य रेलवे स्टेशन पर आकर लगती हैं।

शहर की विभिन्न अकादमी, संस्थान, थिएटर और सिनेमा घरों के भवन सूरज की रोशनी में पर्वत पर जमें सफेद हिम की तरह चमकते हैं। वहीं शहर के पीछे शानदार भव्य पर्वत शान से खड़ा है।

शहर की चौड़ी सड़कों पर अन्तहीन कतार में ट्रॉम, ट्रक, ट्रॉली बसें और मोटर-गाड़ियाँ दौड़ती रहती हैं। धूप से काली पड़ गई त्वचा लिए और अच्छे कपड़े पहने पर्यटक शहर के चारों तरफ के बागों और पहाड़ के रेसार्टों को देखने जाते हैं। ये उन पर्यटन स्थलों को दिखाने वाली बसों में सवार होते रहते हैं।

इस प्रकार किसी समय का पिछड़ा, सुस्त जीवन वाला प्रान्त, अल्मा-अता अब बदल गया है जैसा मैं इसे अपने बचपन में जाना करती थी वैसा अब यहाँ कुछ भी नहीं।

जब मैं बच्ची थी तब अल्मा-अन से सबसे करीबी रेलवे स्टेशन 400 मील दूर था। यहाँ की आबादी बहुत कम थी। अगर साल भर में एक भी मोटरगाड़ी इसकी गलियों में नज़र आती तो सभी लोग चाहे वे जो कुछ भी कर रहे होते छोड़कर इस पहिये के ऊपर दौड़ रहे चमत्कार को देखने दौड़ पड़ते थे।

उन दिनों सभी घर एक मंजिले ही होते थे। वे पेड़ों पर उग आए कुकुरमुत्ते की तरह लगते थे।

हम एक छोटे घर में रहते थे। हमारा एक बड़ा बाग़ीचा था। बागीचे में सेब के कई पेड़ थे, लेकिन इन सबसे महत्वपूर्ण था वहाँ के जंगली और घरेलू दोनों ही किस्म के कई पालतू जानवर जो हमारे साथ ही बड़े हो रहे थे।

जितनी बार पिताजी शिकार पर जाते, अपने साथ

जानवर का जिन्दा बच्चा ले आते। हम उन्हें खिलाते, उनकी देख-भाल करते और खुद ही उनका ख्याल भी रखते थे।

हम सभी का अपना-अपना खास पालतू जानवर था—एक के पास लोमड़ी का सदा मस्त रहने वाला बच्चा था, दूसरे के पास गधे का बच्चा था और मेरी सबसे छोटी बहन के पास गुएना-सुअर था।

मेरे पिता ने मुझसे वादा किया कि "मैं तुम्हारे लिए भेड़िये का एक बच्चा लाऊँगा।"

"एक भेड़िया? अरे नहीं! वो बहुत डरावने होते हैं और एक भेड़िये को पालतू बनाना बहुत मुश्किल है। इसकी जगह आप मेरे लिए कुछ और लाइएगा। लाएँगे ना?"

माँ ने कहा "मुझे लगता है कि तुम सचमुच में ऐसा करने का नहीं सोच रहे हो। वो बच्चों को काटेगा, नोचेगा और भाग जाएगा।

"हाय रे डरपोको! सही में तुम लोग भेड़ियों के छोटे बच्चे से डरते हो? यह बहुत बुरी बात है, क्योंकि भेड़िये तो शानदार ढंग से पालतू बनाए जा सकते है।"

और फिर उन्होंने हमें एक पालतू भेड़िये की कहानी सुनाई जो वास्तव में कभी हुआ करता था।

वह भेड़िया अपने मालिक को वफ़ादार कुत्ते की तरह प्यार करता था, वह हर जगह अपने मालिक के पीछे-पीछे चलता। शत्रुओं से उसकी रक्षा करता, जब कभी भी वे यात्रा पर जाते भेड़िया अपने मालिक के घोड़ों की निगरानी करता। उसमें बस एक ही ख़राबी थी कि उसे शराब पीना बहुत अच्छा लगता था। जैसे ही शराब की महक उसे लगती, वह सूँघता हुआ पूरे घर में घूमता जब तक कि उसे शराब की शीशी न मिल जाए। उस शीशी को वह जमीन पर लुढ़का-लुढ़काकर तोड़ देता और चप-चपकर शराब पी जाता था।

हम लोगों ने पूछा "क्या शराब पी लेने के बाद वह तिमका की तरह शोर मचाता था? प्लेटें तोड़ता था और झगड़ा करता था?

"नहीं, वो ऐसा कुछ भी नहीं करता था। वह रेंगते हुए किसी कोने में दुबक जाता और सो जाता।"

"अच्छा ऐसा क्या?"

"और जब वह सोकर उठता तो वह उतना ही चतुर और मेहनती रहता जैसा कि पहले।"

"आगे क्या हुआ?"

"आगे? हूँ, एक बाद उसके मालिक को बसों और रेलगाड़ियों में सफर कर बहुत दूर जाना था। उसके मालिक को नहीं पता था कि उसके काम की नई जगह कैसी होगी, क्या लोग उसे उसके भेड़िये के साथ रहते हुए काम देंगे? इसलिए उसने अपने भेड़िये को अपने एक दोस्त को देने का निश्चय किया। लेकिन भेड़िया उसके साथ नहीं रहना चाहता था। मजबूरी में मालिक ने उसे जंगल में वापस छोड़ दिया और घर लौट आया। लेकिन उसके घर लौटने से पहले ही भेड़िया भी घर लौट आया। कोई उपाय न देख मालिक ने उसे कुछ दवाई दी और वह बेहोश हो गया। वह आदमी यात्रा पर निकल गया। कुछ दूर चलने के बाद मालिक देखता क्या है कि भेड़िया बग्घी के साथ-साथ लँगड़ाता हुआ चल रहा है। दरअसल हुआ यह कि वह दवाई की खुराक भेड़िए के लिए काफी कम थी जिससे जल्दी ही उसे होश आ गया। उसके बाद वह भेड़िया अपने मालिक के साथ उसी बग्गी में लगभग 5 मील की यात्रा कर रेलवे स्टेशन पहुँचा। फिर उन दोनों ने एक साथ ट्रेनों और बसों पर यात्रा की। मालिक ने सबको यह बताया कि वह उसका कुत्ता है। भेड़िया इतनी अच्छी तरह बरताव करता कि किसी को शक भी नहीं होता था। उस भेड़िये ने एक लम्बी जिन्दगी जी, और वे दोनों कभी अलग नहीं हुए।"

हम सब ने कहा :

"कितना शानदार! हमें भेड़िये की एक और कहानी सुनाइए।"

"कहानियाँ सुनाने का क्या फायदा? मैं तुम लोगों को भेड़िए का एक जीता-जागता बच्चा ला दूँगा। तुम खुद उसकी देखभाल करना। तब तुम मुझे उनकी मजेदार आदतों के बारे में बताओगे, न कि मुझसे पूछोगे।"

उस दिन के बाद मैं अपने पिता को हर रोज तंग करती थी : "मेरा भेड़िये का बच्चा कहाँ है?"

एक सुबह अभी मैं सो ही रही थी, कोई मेरे बिस्तर के पास आया और ऊँची आवाज़ में चिल्लाया,

"उठो! वे लोग उसे ले आए हैं!"

मुझे अच्छे से पता था कि वो क्या है। मैं कूदकर उठी, अपने कपड़े पहने और पशुशाला की ओर भागी पिताजी ने पीछे से आवाज़ लगाई "लुहार घर की ओर जाओ। लुहारघर पशुशाला के आखिरी कोने पर था। वहाँ हम बेकार चीजें रखते थे। जैसे—जंग खाया लोहा, टूटे स्लेज या टूटी तश्तरियाँ। उसका दरवाज़ा मजबूती से बन्द था। दरवाजे के सामने एक बड़ा पत्थर लगा था। मैंने खींचकर दरवाजा थोड़ा-सा खोला, लेकिन अन्दर बिल्कुल अँधेरा था। रोशनी न आने के कारण मुझे कुछ दिखाई नहीं दे रहा था। अचानक भट्ठी में जहाँ लुहार आग जलाते थे, अँधेरे में चार चमकीली हरी आँखें दिखाई दीं। मैं घबराकर पीछे हटने लगी। मैंने कभी सोचा भी नहीं था कि भेड़िये के बच्चे से डर जाऊँगी। लेकिन... लेकिन इसकी तो चार आँखें हैं।

"अरे बेवकूफ! वहाँ पर वैसे दो हैं।"

दोनों बच्चे गुर्राए। जैसी आवाज़ें वे कर रहे थे मैंने अनुमान लगाया कि वे भट्ठी के अन्दर घुसे जा रहे हैं।

मुझे अच्छे से पता था कि किसी भी जानवर से दोस्ती करने का सबसे अच्छा तरीका है उसे कुछ खाने को देना। मैं दौड़ कर रसोइघर में गयी वहाँ से एक कटोरा दूध लिया और उसमें कुछ रोटियाँ भिगोकर वापस लुहारघर की ओर लौटी।

मैंने दरवाजा खुला छोड़ दिया ताकि अन्दर रोशनी जा सके। कटोरा जमीन पर रखकर मैं खुद अँधेरे में छुप गयी।

बच्चे खाने के पास आने से डर रहे थे। एक लम्बा अरसा गुज़र गया। लेकिन बच्चे भूखे थे और खाने से स्वादिष्ट महक आ रही थी। आखिरकार एक धूसर थूथुन बाहर की ओर झाँका। उसी क्षण दूसरा भी आया। बच्चे चारों पंजों पर चलते हुए बाहर आए, चारों तरफ देखा और रेंगते हुए कटोरे तक चले गए।

अब वे अपना डर भूल गए थे। अपने पंजों को फैलाकर वे कटोरे के पास खड़े हो गये और दोनों एक दूसरे को हिलाते हुए, धक्का देते हुए और रोकते हुए दूध से रोटियों के टुकड़े निकालने लगे। चूँकि उन्हें निगलना भी था और गुर्राना भी था इसलिए दोनों कटोरों में ही सरक जाते और खाँसते और इससे दूध में बुलबुले बनते।

खानें में वे दोनों इतने व्यस्त थे कि उनका ध्यान मुझ पर नहीं गया। मैं पंजों के बल चलती हुई उनके बहुत करीब आ गयी।

वे बच्चे बिल्कुल कुत्ते के बच्चों जैसे ही थे। उनके बड़े गोल-गोल पेट और बड़े पंजे थे। एक ही अन्तर था कि उनकी पूँछ पतली थी और उस पर बाल नहीं थे और

उनके कान कड़े और नुकीले थे।

जल्दी ही कटोरे में कुछ भी नहीं बचा, लेकिन इन बच्चों का खाना अभी पूरा नहीं हुआ था। उनमें से एक अपनी चारों टाँग कटोरे में रखकर खड़ा हो गया और कटोरे को चाट-चाटकर साफ कर दिया। दूसरे ने अपना सिर उठाया और मुझे घूरने लगा और घूरता चला गया। मैंने देखा कि बेचारे को कुछ समझ नहीं आ रहा इसलिए हँसकर मैंने उसे थपथपाने की लिए हाथ बढ़ाया।

झटाक!

मुझे हाथ हटाने का बमुश्किल ही समय मिल पाया। और वह वापस लौट आया।

"कितना मतलबी है? क्या हुआ अगर वह बच्चा है, इसका मतलब वह किसी को अपने आप को थपथपाने नहीं देगा।"

"आखिर क्यों?" "वो लगभग मेरी उँगली काटने ही वाला था। मैंने क्या किया था? मैंने तो उन्हें थोड़ी दूध और रोटी दी। मैं उन्हें दिखा दूँगी!"

मैं अपनी दोस्ती इन बच्चों पर थोपना नहीं चाहती थी। पर सच बताऊँ, मुझे बुरा लगा था।

मैं जब बाहर आई बच्चों ने मुझे चारों ओर से घेर लिया।

"क्या तुमने भेड़िये को देखा? वे कैसे दिखते हैं?" मैंने आँख मारते हुए कहा "वे शानदार भेड़िये हैं, अभी से ही वे मेरे आदी हो गए हैं और मेरा कहा मानते हैं, अब मुझे सोचना है कि उनका नाम क्या रखें।"

हम सब बैठकर नाम सोचने लगे पिताजी ने बताया था कि उनमें से एक नर है और एक मादा। इसलिए हमने उनका नाम रखा टॉमचिक और दियांका।

दोपहर को मैं उनके लिए थोड़ा और खाना लेकर आयी और इस बार पुचकारने वाली आवाज़ निकालकर उन्हें बुलाया। बच्चे रेंगते हुए बाहर आए और खाने लगे। मैंने दरवाजा चौड़ा खोल दिया। हमारे कुत्ते लुहारघर के अन्दर झाँकने लगे। मुझे डर था कहीं कुत्ते उन पर हमला न कर दें। इसलिए मैं उन्हें पीछे हटाने लगी। लेकिन भेड़िये के बच्चे अपनी टाँगों के बीच पूँछ करके और चेहरे पर बड़ी मुस्कान लिए कुत्ते के पास दौड़ते हुए पहुँच गये और कुत्ते की नाक चाटने की कोशिश करने लगे। फिर पीठ के बल लेटकर टाँगों को ऊपर कर मस्त होकर खेलने लगे, जैसे कि कोई कुत्ते का पिल्ला खेलता है। शायद उन्हें ये कुत्ते भेड़िये से दिख रहे हों, और इसलिए वे खुश हो गए हों। कुत्ते गुर्राए उन्हें शायद इन बच्चों से ज्यादा खाने के कटोरे में दिलचस्पी थी। उन्होंने कटोरा सूँघा, जो कुछ बचा-खुचा था उसे खाया और वहाँ से चल दिए।

दोनों बच्चे कुत्तों को देखकर इतने खुश थे कि अपनी सारी झिझक, सारा डर भूलकर उनके पीछे चलने लगे। वे लुहारघर से काफी दूर निकल चुके थे। तभी उनकी नजर अपने चारों ओर के नज़ारे पर पड़ी, वे डर गए। यह जंगल की तरह बिल्कुल नहीं था।

उनकी नजर बग्घी पर पड़ी। वे डर गये और टाँगों को मोड़ते हुए वे झुक गए। उन्होंने थोड़ी देर इन्तजार किया लेकिन बग्घी नहीं हिली। तब उन्हें लगा कि वह उन पर हमला नहीं करने जा रही है। अब उन्हें हिम्मत आ गई थी।

इन बच्चों को अकेला छोड़कर कुत्ते कब का बरामदे में पहुँच गए थे। वे कूँ-कूँ कर रोते रहे। लेकिन कुत्तों का वापस आने का कोई इरादा नहीं था। तब बच्चे खुद आगे बढ़ने लगे।

जैसा कि तय था, इन बच्चों को अस्तबल को पार करना ही था। इसी अस्तबल के नीचे हमारी कुतिया ल्युट और उसके बच्चे रहते थे। ल्युट को लगा कि ये भेड़िये के बच्चे उसके बच्चों पर हमला करने जा रहे हैं। वह छलाँग लगाती हुई आई और टॉमचिक के गर्दन के फर को दाँतों से दबाकर उसे गुस्से से झकझोर दिया। हम दौड़ते हुए उन्हें बचाने आए।

ल्युट ने उसे छोड़ दिया। इसके बाद टॉमचिक और दियांका दौड़कर लुहारघर में घुस गए और रेंगते हुए भट्ठी के बहुत अन्दर चले गए और दुबक गए।

"बेचारा टॉमचिक! पहली बार बाहर घूमने निकला और देखो क्या हुआ उसके साथ!"

हम सभी अपराधबोध से लुहारघर के सामने इकट्ठा हो गए।

हम झाँक-झाँककर भट्ठी के नीचे देख रहे थे। बच्चों को प्यार से बुला रहे थे और उन्हें खाने को मजेदार-मजेदार चीजें दे रहे थे। जहाँ तक खाने का सवाल है, वे बड़े मजे से खा रहे थे। लेकिन बदले में हम पर गुर्रा रहे थे।

चाहे उनकी भावनाओं को कितना भी ठेस क्यों न

पहुँची हो वे ज्यादा लम्बे समय तक भट्टी के अन्दर नहीं रह सकते थे। सबसे पहले दियांका ने अपना सिर बाहर किया था। वह रेंगती हुई बाहर आई। थोड़ी देर बाहर बैठी और फिर भट्टी के नीचे चली गई।

फिर टॉमचिक बाहर आया। उसके कान पर खून लगा था। सिर के फर अस्त-व्यस्त हो गए थे और उसकी आँखों के पास खरोच थी। वह अपना सिर हिलाता रहा और अपने चोट खाए कान को जमीन की ओर झुकाता रहा। वहाँ भट्टी के किनारे दोनों साथ-साथ बैठे थे दोनों दुखी और अकेलापन महसूस कर रहे थे और बाहर पशुशाला की ओर देख रहे थे।

दूसरा दिन भी वैसे ही गुजर गया। लेकिन जब मैं तीसरे दिन सुबह खाना लेकर पहुँची, दोनों दरवाजे पर मेरा इन्तजार कर रहे थे। हमने ग़ौर किया कि दियांका अपने भाई की तुलना में ज्यादा बहादुर है। वही हमारे बुलाने पर पहले बाहर आई थी। खाने के कटोरे को देखते ही वह अपने पंजों को हड़बड़ी में चाटना शुरू कर देती थी।

दियांका मेरे पीछे-पीछे पशुशाला तक आई। मेरे आँगन तक पहुँचने के थोड़ी देर बाद ही वह भी वहाँ आ गयी। टॉमचिक पीछे ही रह गया।

आँगन में हम सभी चाय पी रहे थे। सभी दियांका को देखकर मुस्कुराए और उसे खाने को अच्छी-अच्छी चीजें दी। जब स्वादिष्ट चीजों को खा-खाकर अपनी स्वादेन्द्रियों को तृप्त कर चुकी तब वह वापस अपने भाई के पास चली गई। कायर टॉमचिक उसके थूथुन को सूँघने लगा और उसे समझ में आ गया कि दियांका को मजेदार चीजें खाने को मिली हैं। वह उसके पंजों को चाट रहा था और बार-बार उसे सूँघ रहा था। जबकी दियांका वहाँ खुश खड़ी थी। उसकी आँखें मोतियों की तरह चमक रही थीं। उसका पेट इतना ज्यादा भरा था कि खुशी में उसकी पूँछ हवा में खड़ी हो गई थी, और नीचे हो ही नहीं रही थी। ऐसा लग रहा था मानों कह रही हो, "देखो, बहादुर होना कितना अच्छा होता है।"

इसके बाद दोनों अपने चारों ओर की दुनिया देखने निकले, इस बार वे पहले की तरह डरे हुए नहीं लग रहे थे। वे पशुशाला के चारों ओर घूमे, घर का चक्कर काटा और फिर अपने आप को बागीचे में पाया।

मैं चुपचाप उनका पीछा कर रही थी। बागीचा ज़रूर ही उन्हें जंगल की याद दिला रहा होगा। अपने अर्जित नए आत्मविश्वास से वे लम्बे लगने लगे। उनकी चाल में दृढ़ता आ गई और वे झाड़ियों में घुस गए। फिर वे बाहर आए, खुली जगह में थोड़ी देर खेले, फिर पेड़ों में गायब हो गए। वे सभी पेड़ों को सूँघते चल रहे थे। अन्त में जब वे बुरी तरह थक गए तो वे चेरी की झाड़ में सो गए।

मैंने उन्हें वहाँ छोड़ दिया। रात में मैं उनका खाना वहीं लेकर गयी, लेकिन वे वहाँ नहीं थे। मैंने उन्हें बार-बार आवाज़ लगाई, अँधेरे में दूर तक देखने की कोशिश करने लगी कि क्या वे आ रहे हैं।

अन्त में मैंने कटोरे को घास पर रखा और उसके पास ही बैठकर एक सींक से खाने को मिलाने लगी।

वे कहाँ होंगे?

मुझे चिन्ता होने लगी तभी अपने सामने की झाड़ियों

में मुझे दो थूथुन दिखे। हो न हो वे वहाँ काफी पहले आ गए होंगे और देख रहे कि मैं क्या करती हूँ। शायद वे मुझे अंधी समझ रहे होंगे क्योंकि वे दोनों ठीक मेरी नाक के नीचे झाड़ियों में थे। लेकिन किस तरह मैं उनकी आहट सुन पाती, हालाँकि दोनों अच्छे खासे मोटे-ताजे थे फिर भी चलते समय वे किसी तितली से भी कम आवाज़ करते थे।

जब वे खाना खा रहे थे, मैं वहीं घास पर पसर गयी और ऐसा दिखाने लगी कि मैं सो रही हूँ। हो सकता यहाँ बागीचा था जहाँ उन्हें आजादी का अहसास हो रहा था, या हो न हो वो मेरे अभ्यस्त हो गए हों। चाहे जो कुछ भी हो इन बच्चों ने मेरे साथ बहुत बुरा बर्ताव किया, एक तो मेरे चेहरे पर साँस छोड़ने लगा। दियांका ने मेरा जूता चुरा लिया और उसे खींचकर झाड़ियों में ले गई। टॉमचिक उससे जूता छीनने को पीछे लपका। जब मैंने उनसे उनका नया खिलौना छीना वह बड़ी बुरी हालत में था।

उछलते-कूदते वे सारा दिन बागीचे में बिताते और रात को भी वहीं रहते।

कई दिन बीत गए। इन बच्चों को पूरी आजादी मिल गई थी। मेरी एक ही चिन्ता थी, इनकी भूख को हमेशा शान्त रखना ताकि यह उनके दिमाग की परेशानी न बने और वे भोजन के शिकार पर न निकल पड़े।

उन्हें पहली खुराक तड़के सुबह लगभग 5 बजे मिलती थी। चूँकि मैं किसी को जगाना नहीं चाहती थी इसलिए शाम को ही मैं उनका भोजन बनाकर अपने बिस्तर के पास रख लेती थी। सुबह, सूर्योदय के समय अपनी खिड़की से कूदकर बागीचे में जाती। उन बच्चों को ढूँढ़कर खाना खिलाती। उनके खा लेने के बाद मैं कटोरा उठाती, खिड़की से चढ़कर अपने कमरे में जाती और बिस्तर में घुसकर गहरी नींद सो जाती। दोनों बच्चे मुझे खिड़की के अन्दर जाने तक देखते रहते। अगर कभी मैं देर तक सो जाती तो ये बच्चे मेरी खिड़की तक आते अपने पिछले पंजों पर खड़े होकर अन्दर झाँकते और भेड़ियों वाली आवाज़ निकालते थे।

मेरा बिस्तर बिल्कुल खिड़की से लगा हुआ था। जैसे ही ये बच्चे देख लेते की मैं जाग गई हूँ तो खुशी से कूदने लगते, जल्दी ही वे पालतू बन गए। मुझे उनसे बहुत ज्यादा लगाव हो गया था। अगर कई घण्टों तक मैं उन्हें नहीं देखती तो मुझे उनकी याद आने लगती थी।

मैं घण्टों उनके साथ खेलती रहती थी। हम घास पर लोट-पोट होते बागीचे के चारों ओर दौड़ते। जब कभी भी मैं वहाँ पढ़ने जाती वे मुझे जल्दी ही ढूँढ़ निकालते। कुछ पल शान्ति से मेरे सामने बैठकर मुझे देखते। फिर कुछ मिनट बाद मुझे तंग करने लगते।

एक बार दियांका मेरी पढ़ाई से बहुत ज्यादा ऊब गई। उसने एक लम्बी जम्हाई ली और मेरी किताब पर आ बैठी। मैंने उसे धक्का दिया, उसे एक ओर लुढ़का दिया और फिर उसे उसके पिछले पंजों पर घास के ऊपर खींचने लगी। इस बीच टॉमचिक मेरी किताब हथिया चुका था। और आनन्द ले लेकर उसके टुकड़े-टुकड़े कर रहा था।

इन बच्चों की एक मज़ेदार आदत थी। जब वे खाना खा लेते थे, उनके पेट फूल जाते थे और सख्त हो जाते थे। वे जमीन पर पड़ जाते, और अपने पेट को जमीन पर रगड़ते हुए रेंगते थे।

यह बहुत ही आश्चर्य जनक था। हालाँकि वे चिकित्सा और दवाइयों के बारे में कुछ नहीं जानते थे लेकिन उन्हें पता था कि मालिश बहुत अच्छी चीज़ होती है।

एक बार मैं बागीचे में यूँ ही घूम रही थी। मैंने सोचा क्यों ना थोड़े आलूबुखारे खाए जाएँ। चूँकि मैं नीचे से आलूबुखारों तक नहीं पहुँच पा रही थी, इसलिए मैं पेड़ पर चढ़ गई और डालियों को हिलाने लगी। एक पका हुआ आलूबुखारा धप की आवाज़ के साथ जमीन पर गिरा। जब मुझे लगा कि मैंने अपने खाने भर आलूबुखारे गिरा लिये हैं, तो मैं नीचे उतरी। नीचे मैंने एक भी आलूबुखारा नहीं पाया। मुझे आश्चर्य हुआ, मैं फिर पेड़ पर चढ़ी डालियों को हिलाया। जब मैं नीचे आई तो पाया दियांका और टॉमचिक मेरे सारे आलूबुखारों को चपड़-चपड़कर खा रहे हैं।

इस तरह मुझे पता चला कि उन्हें फल भी पसन्द हैं। यहाँ तक कि उन्हें पता था कि क्या स्वादिष्ट है और क्या नहीं। क्योंकि वे हमेशा पके हुए फल ही खाते थे।

इसके बाद मैं उन्हें अक्सर ही चीकू, आलूबुखारा और सेब की टहनियों को हिलाकर ये फल उन्हें खाने को देती।

दियांका और टॉमचिक को बागीचे के एक-एक

कोने के बारे में पता था। लेकिन वे कभी भी घर तक नहीं आते। क्योंकि उन्हें दूसरों का साथ पसन्द नहीं था। मैं ही एक अकेली इन्सान थी जिसे वे स्वीकार करते थे और प्यार करते थे। वे मेरा स्वागत करने आते। मुझे नजदीक से सूँघते, मेरे ऊपर कूदते, और अपने पंजे मेरे कन्धों पर रखते और मेरा चेहरा चाटते।

एक बार मैंने सबके बीच हाँका कि वो बच्चे मेरी आवाज़ पहचानते हैं। कइयों की आवाज़ में मेरी आवाज़ को पहचान जाएँगे।

"यह सही नहीं है। वो तुम्हारी आवाज़ नहीं पहचान सकते! उन्हें बस खाना चाहिए। अगर वे भूखे हैं तो इससे उन्हें कोई मतलब नहीं कि कौन उनको खाना देता है।

मैंने कहा, "नहीं ऐसा नहीं होता है। चलो कोशिश करते हैं और देखते हैं।"

यह प्रयोग देखने आठ बच्चे आए। यहाँ तक कि बड़ों को भी जिज्ञासा होने लगी।

सभी बागीचे के द्वार पर जमा हो गए।

मेरी बहन ने कहा, "रुको! मुझे खाने का कटोरा दो।"

वह कटोरा लेकर बागीचे में गई। बगीचे में वह दोनों को आवाज़े लगाने लगी। काफी देर वह आवाज़
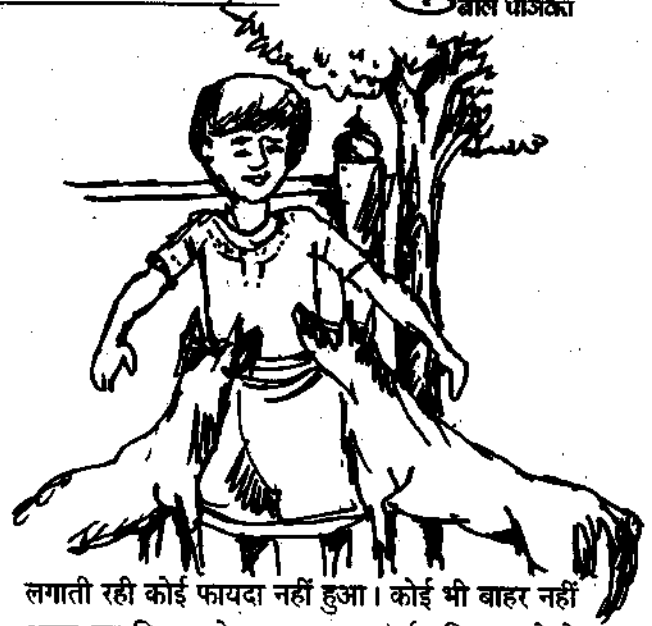
लगाती रही कोई फायदा नहीं हुआ। कोई भी बाहर नहीं आया वह निराश होकर वापस आ गई। फिर, दूसरे ने अपना भाग्य आजमाया और फिर तीसरे ने। सभी को एक मौका दिया गया। आखिर में मैंने कहा :

"मुझे कटोरे की भी जरूरत नहीं। वो बिना इसके भी मेरे पास आएँगे।" सच बताऊँ, मैं जितने विश्वास के साथ कह रही थी, अन्दर ही अन्दर मुझे उतना विश्वास नहीं था। क्या होगा अगर वे नहीं आएँगे?

"दियांका! टॉमचिक", मैंने आवाज़ लगाई मेरा दिल जोरों से धड़क रहा था।

तब सभी ने उन दोनों को भागकर मेरे पास आते देखा। वे तुरन्त आए। वो मेरे पुकारने का ही इन्तजार कर रहे थे।

"देखो! तुम कहते हो कि ये मेरी आवाज़ नहीं पहचानते!"

गर्मियाँ खत्म हो रही थीं। दोनों बच्चे खासा बड़े हो गए थे। कुत्ते भी काफी सम्मान देने वाले हो गए थे। जब दियांका और टॉमचिक बच्चे थे, तब ये कुत्ते इन पर थोड़ा भी ध्यान नहीं देते थे। लेकिन अब चीजे बदल गई थीं। कुत्ते अक्सर मेरे पालतू जानवरों से मिलने आते थे।

एक दिन कुत्ते दौड़ते हुए बागीचे में आए।

वो पेड़ों के चारों ओर भागते, भौंकते, खुशी से चिल्लाते और जमीन पर लोट-पोट होते। उस दिन खिली हुई सुहानी सुबह थी। जमीन अभी नम थी और जमीन पर गिरे पत्ते कुत्तों को इतना ललचा रहे थे कि वे उनमें

अपनी नाक घुसाए बिना नहीं रह पाए। पत्तों के ढेर में वे घुसते चले जा रहे थे और रुकने का नाम ही नहीं ले रहे थे। ऐसा लग रहा था मानो अभी तक उन्हें किसी ने बाँधे रखा था और बसन्त ने आकर उन्हें छुड़ा दिया है। भेड़िए के बच्चे भी कुत्तों को देखकर बहुत खुश हो गए और जल्दी ही उनके साथ खेलने लगे। दियांका ने टॉमचिक को अपने पंजों से एक जोरदार धक्का दिया, उसे एक ओर धकेल दिया और अपने पंजों पर झुककर इन्तजार करने लगी मानो कहना चाहती हो : "चलो टॉमचिक इन्हें दिखा दें कि भेड़िए के बच्चे कैसे खेलते हैं!"

और बस हुल्लड़बाजी शुरू हो गई। कुछ ही समय में दियांका ज़ागराइ के साथ दौड़ लगाने लगी, और ल्यूट टॉमचिक की पूँछ खींच रहा था। ज़गराइ ने जब दियांका का पीछा करते हुए उसे धक्का मारकर गिरा दिया तब भी वह नाराज़ नहीं हुई। वो कूदकर खड़ी हुई, अपने आप को झाड़ा और पहले से कहीं ज्यादा जोश के साथ खेल को जारी रखा।

उस दिन के बाद, हर रोज़ कुत्ते बगीचे में आते। कभी-कभार दियांका और टॉमचिक उन्हें पशुशाला तक छोड़ने भी आते। इस तरह भेड़िए के बच्चे और कुत्ते सच्चे दोस्त बन गए।

ऐसा बहुत ही कम ही होता है, लेकिन एक बार अगर भेड़िया कुत्ते से दोस्ती कर लेता है तो यह कभी न खत्म होने वाली दोस्ती होती है।

मैं तुम्हें एक सच्ची कहानी सुनाऊँगी। यह कहानी है उत्तर में रहने वाले याकुत और उसकी कुतिया की। वह अपने रेण्डियरों के साथ उत्तर में एक कैम्प बना कर रह रहा था। सर्दियों के दिन थे। मीलों तक एक भी घर या कुत्ते नहीं थे। यह फरों वाली कुतिया उसके रेण्डियरों के झुण्ड की रक्षा करती थी। इसी बीच उस आदमी ने ध्यान देना शुरू किया कि उसकी कुतिया सूखी मछलियों को जंगल ले जाती है। उसने एक बार उसका पीछा किया लेकिन नहीं जान पाया कि माजरा क्या है? हर रोज़ कुतिया कुछ मछलियाँ ले जाती थी। वह हमेशा सोचता कि "वह उसे खुद क्यों नहीं खा लेती? आखिर उसे लेकर जाती कहाँ है?" उसी वसन्त में कुतिया ने कई प्यारे-प्यारे पिल्लों को जन्म दिया। वह आदमी बहुत ही खुश हुआ, क्योंकि याकुत रेण्डियर पालने वालों के घरों में कुत्तों का हमेशा स्वागत किया जाता है और उस समय उत्तर में आप एक तन्दुरुस्त कुत्ते के बदले एक रेण्डियर पा सकते थे। वह देख रहा था कि ये पिल्ले बड़े ही स्वस्थ्य हैं। वे मजबूत और गठीले थे और बड़ी तेज़ी से बड़े हो रहे थे। जल्द ही उस आदमी को अपने गर्मियों के आवास में लौटना था। उसने अपनी चीज़ों को बाँधा, उन्हें स्लेज पर लादा और जाने को तैयार हो गया। कुत्ते और वे छोटे-छोटे पिल्ले लुढ़कते-पुढ़कते उसके पीछे चलने लगे। उनका रास्ता जंगलों से होकर गुजरता था। अचानक वह आदमी जब पीछे मुड़ा तो उसने इस कुत्ते के परिवार के साथ एक भेड़िये को चलते देखा। वो बन्दूक उठाकर उसे मारने ही वाला था कि एक ख्याल उसके दिमाग में आया। हो न हो यह भेड़िया ही इन पिल्लों का पिता है और पूरी सर्दियाँ कुतिया ने इसके लिए ही मछलियाँ चुराई हों। उसने बन्दूक रख दिया और वह भेड़िया उनके साथ आ गया।

सर्दियाँ आते-आते दियांका और टॉमचिक पूरी तरह बड़े हो गए थे। उनके फर घने और लम्बे थे, और गालों पर लम्बे बाल थे उनकी पूँछें फरदार और मुलायम हो गई थीं। अब वे किसी मजबूत कुत्ते की तरह बड़े हो गये थे।

पहली बर्फबारी के साथ ही उन लोगों ने अपने लिए माँद बना ली। माँद इतनी बड़ी थी कि कभी-कभी कुत्ते भी रेंग कर उसमें चले जाते और भेड़ियों के साथ सो जाते। कुत्तों के साथ उनकी दोस्ती का बुरा असर भी पड़ा था। कुत्तों ने उन्हें मुर्गियाँ चुराना सिखा दिया था। चूँकि इस चोरी के लिए उन्हें हमेशा ही सज़ा मिलती थी, इसलिए अब वे वाड़ा फाँदकर पड़ोसियों की मुर्गियाँ चुराने लगे। एक दिन हमारा पड़ोसी हमारे पिताजी से मिलने आया। वह अपने हाथ में मरी हुई बत्तख लिए था। उसने कहा हमारे भेड़िये के बच्चों ने उसे मारा था और इसलिए वो उसकी कीमत माँग रहा था। जाते-जाते उसने कहा "और मैं तुम्हें चेतावनी देता हूँ, अगर मैंने उन्हें दुबारा अपने बाड़े में देखा तो तुम पछताओगे।"

उस दिन से दियांका और टॉमचिक को जंजीरों से बाँध दिया गया। अब उनके लिए जिन्दगी उतनी आजाद और आसान नहीं रह गई थी।

एक सुबह हमारे बाड़े में एक आर्गन बजाने वाला आया। वो वॉल्ट्स* की धुन बजाने लगा। अचानक, खलिहान के पीछे से एक मोटी आवाज़ उस धुन से सुर

*जर्मन नृत्य का संगीत

मिलाने लगी, और कुछ देर बाद हमारे भेड़िये आर्गन बजाने वालों के साथ गा रहे थे। जैसे ही उन लोगों ने गाना शुरू किया हमारे कुत्ते हर जगह से रेंगते हुए वहाँ चले आए उन्होंने भी सिर ऊँचा किया और हर सुर पर हुआने लगे। इस कनसर्ट को देखकर आर्गन बजाने वाले को इतनी जोर की हँसी आई कि उसके गालों पर आँसू लुढ़क आए। अब वो ध्यान नहीं दे रहा था कि वो क्या बजा रहा है बस उस बेसुरे कोरस को संगीत देता रहा। हमें कोई संगीत नहीं सुनाई दे रहा था बस यही बेसुरा कोरस (समूह गीत)।

अब ये बच्चे जंजीरों से बँधे होते थे। उनके जैसे आजादी को प्यार करने वाले जानवरों को जंजीरों में बाँधा जाना कोई खुशी की बात नहीं थी। वे सारा दिन हुआ-हुआ करते रहते थे और रात होने के साथ यह दुखभरी आवाज़ में बदल जाती।

हमने देखा कि हमारे कुत्ते अब भेड़ियों की तरह हुहुआने लगे थे और भेड़िए कुत्तों की तरह भौंकने लगे थें।

पहले-पहल पिताजी यह मानने को तैयार नहीं हो रहे थे। लेकिन जब मैंने उन्हें दियांका को भौंकते हुए सुनाया तो वो हक्के-बक्के रह गए।

इन भेड़ियों को खुश करने के लिए हम उन्हें शहर के बाहर घनी झाड़ियों और हरियाली में टहलाने ले जाया करते थे। ये भेड़िये बड़े मजे से दौड़ लगाया करते थे। लेकिन उनके लिए हम बहुत ही खराब साथी थे। उन्हें पूरी आजादी मिलती और वे खुशी में दौड़ते और हम उतनी ही जल्दी थक जाते।

उन्हें सही शारीरिक व्यायाम नहीं मिल पाता था; इसलिए वे बेचैन रहते थे। जब भी उन्हें थोड़ी-सी आजादी मिलती वे अपनी जंजीरे तोड़कर भागना चाहते थे। आखिरकार उन्होंने जंजीर खोलना सीख लिया। किसी तरह वो जंजीर के ताले में लगे स्प्रिंग को पंजों से दबाते और वह खुल जाता और जब वे आजाद हो जाते तो सभी लोग मेरे पास भागे आते, क्योंकि वे दोनों केवल मेरी बात ही मानते थे।

अक्सर ही वे मेरे पास आते और कहते, "चलो भेड़ियों की बहन (ऐसे ही वे मुझे बुलाते)। जाओ अपने प्यारों को बाँध दो!"

नए साल के ठीक पहले कोई चिल्लाया, "टॉमचिक जंजीर खोलकर पड़ोसी के बागीचे में चला गया है!" मैं बिना अपनी टोपी और कोट लिए भागी और बाग से जाने वाले छोटे रास्ते से दौड़ी। सर्दियों में बागीचे में रास्ता नहीं रह जाता। केवल बर्फ की मोटी परत वह भी घुटनों तक ऊँची।

मैं बाड़े से ही देख सकती थी कि टॉमचिक पड़ोसी के बागीचे के बीच खड़ा है; पड़ोसी अपने घर से बन्दूक लिए बाहर आ रहा था।

दूर से ही मैं चिल्लाई, "रुको! रुक जाओ! मैं आ रही हूँ! मैं उसे बाँध दूँगी! गोली मत..." मेरी आवाज़ गले में ही दब गई जब मैंने देखा कि पड़ोसी उसे मारने के लिए बन्दूक तान चुका है। टॉमचिक निर्जीव-सा जमीन पर गिर गया।

मैं पड़ोसी की ओर भागी। जंजीर उसके ऊपर फेंका और उसका कोट पकड़ कर बार-बार दुहराने लगी, "देखो तुमने क्या किया! देखो तुमने क्या किया!"

मैंने टॉमचिक का निर्जीव सिर अपनी गोद में लिया और वहीं बर्फ पर बैठकर जोर-जोर से रोने लगी। मुझे कुछ याद नहीं कि मैं कैसे घर आई और कैसे टॉमचिक को घर लाया गया। शाम होते-होते मैं बुरी तरह बीमार पड़ गई और मुझे तेज बुखार हो गया।

अगले दो महीने मैं बीमार रही।

दियांका अब बिल्कुल अकेली थी। जब कभी भी लोग मेरे लिए दलिया या दवाई लाते तो मैं उनसे पूछती, "क्या तुमने दियांका को खाना खिला दिया? क्या वो सो रही है?"

"दियांका बहुत मजेदार हो गई है! वो बिल्कुल भेड़ियों जितना खाने लगी है और शायद टॉमचिक को भूल भी गई है।"

जैसे ही मुझे कुछ बेहतर महसूस होने लगा मैंने उनसे दियांका को मेरे पास लाने को कहा। एक विशालकाय मादा-भेड़िया अपनी जंजीर घसीटती हुई मेरे कमरे में आई। मैं तो उसे पहचान भी नहीं पा रही थी। वो बहुत डरावनी दिख रही थी। हालाँकि मैं डरावनी नहीं दिख रही थी फिर भी वो भी मुझे नहीं पहचान पा रही थी। मेरे बाल फूल गए थे और मैं बुरी तरह पतली हो गई थी।

दियांका हर चीज आश्चर्य से सूँघ रही थी। मैंने उसे आवाज़ लगाई, "दियांका! दियांका!"

उसने तुरन्त मेरी आवाज़ पहचान ली और दौड़कर

मेरे पास आ गई। जैसे ही मैंने उसे थपथपाया उसने अपनी आँखें बन्द कर लीं और खुशी में अपनी पूँछ हिलाने लगी।

एक मोटा बिल्ला मेरे बिस्तर पर बैठा था। उसे दियांका पसन्द नहीं आई। उसे लगा यह कोई लम्बी नाक वाला कुत्ता है, और कुत्तों से दो-दो हाथ करने की उसे आदत थी।

वो गुर्राया और दियांका के थोथुन को अपने पँजों से खरोचने लगा! मेरी साँस रुक गई।

दियांका के पीठ पर के फर खड़े हो गए। उसने अपना डरावना जबड़ा खोला और...

"दियांका! मेरी प्यारी! मेरी अच्छी!"

मैंने उसे गले लगा लिया। उसने बिल्ली को उठाया, बड़े आराम से उसे पीठ से पकड़ा और बिस्तर से नीचे जमीन पर रख दिया और वापस मेरे पास आ गई।

हर वसन्त में हम शहर से दस मील दूर जंगल में बने अपने घर में जाया करते थे। यह घर झरने के नजदीक पहाड़ों पर था। चरागाह के नजदीक और उससे ऊपर पहाड़ों पर, चारों ओर फूल ही फूल खिले होते थे। पहाड़ों की चोटियों पर जमी बर्फ के नजदीक कज्जाक चरवाहों की ग्रीष्मकालीन छावनियाँ हुआ करतीं थीं। उनके बच्चे हमारे सबसे अच्छे दोस्त थे। हमें अपना ग्रीष्मकालीन आवास बेहद पसन्द था। हमें वहाँ रहना बहुत अच्छा लगता था।

उस साल मैं वहाँ जाने का बेसब्री से इन्तजार कर रही थी। मैंने सोचा वहाँ दियांका को जंजीरों से आजादी मिल जाएगी।

लेकिन मैं गलत थी। वहाँ पास ही एक गाँव था। गाँव के लोग खुले घूमते भेड़िये को देखकर डर जाते थे।

एक दिन दियांका ने अपने आप को जंजीरों से आजाद कर लिया और गाँव की ओर भागी। कुछ अस्पष्ट-सी आवाजें आने लगीं और कोई गुस्से में दियांका पर आक्रमण करने लगा। वो निश्चय ही एक साहसी कुत्ता था। दियांका उस पर झपटी। अगले ही पल कुत्ता मर चुका था। कुछ लोग हाथों में छड़ी और चाबुक लिए उसकी ओर आने लगे। जब दियांका को लगा कि कुछ बुरा होने जा रहा है, वो मेरे पीछे आकर खड़ी हो गई; मानो कह रही हो, "मैं यहाँ सुरक्षित हूँ, अब मुझे कोई भी छू नहीं सकता!"

ये सही ही था। मैं किसी को उसे तकलीफ नहीं पहुँचाने देती। लेकिन वे चिल्लाए और डाँटने लगे। फिर वे मेरे माता-पिता से शिकायत करने गए।

कई महीने बीत गए। पिताजी हमेशा मुझे समझाते कि क्या दियांका सारी जिन्दगी जंजीरों में बँधी-बँधी बिता देगी। लेकिन मुझे इसे समझने में लम्बा समय लगा।

उन्होंने कहा, "अगर तुम्हें जंजीरों से बाँध दिया जाए तब तुम्हें मालूम पड़ेगा कि बँधे रहना कितना बुरा लगता है।" मैंने इसे आजमाने का सोचा। मैं दियांका के साथ बैठ गई और सारा दिन वहीं उसके साथ-साथ बिताया और तब मैं पिताजी की बात मान गई। एक सुबह मैंने उसे ढेर सारा नाश्ता दिया। पिताजी ने घोड़े पर जीन चढ़ाई और दियांका की जंजीर हाथ में ली। दियांका उनके पीछे-पीछे खुशी से दौड़ गई।

वो दियांका को दूर घने जंगलों में ले गए। वहाँ उसकी जंजीर खोल दी और अगले ही पल वो गायब हो गई।

पिताजी ने सोचा, "यह सही ही है, चाहे तुम भेड़िये को कितना ही खिलाओ, उसकी एक आँख हमेशा जंगल पर लगी रहती है।"

उन्होंने दियांका के चले जाने तक इन्तजार किया
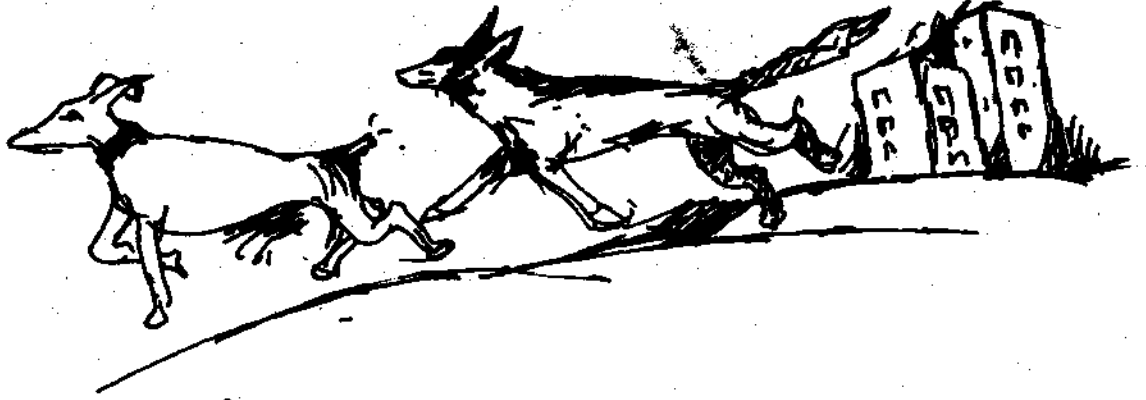
और फिर घर की ओर चले। वो शाम से पहले नहीं लौटे।

मैंने पूछा, "क्या वो चली गई?"

"हाँ! और यहाँ तक की वो अपना प्यार कहना भी भूल गई।" पिताजी ने जवाब दिया।

मैंने कहा, "ठीक है, मुझे इससे कोई मतलब नहीं, मैं खुश हूँ।" और मैंने अपना सिर लटका लिया, क्योंकि यह सोचकर ही बहुत दुख हो रहा था कि मेरी दोस्त आसानी से मुझे छोड़कर चली गई है।

तभी कुछ ठण्डी-सी चीज ने मुझे छुआ, मैं पीछे मुड़ी। वो दियांका थी। वो पिताजी के पीछे-पीछे घर चली आई थी।

हमने उसे भेजने का एक और प्रयास किया। इस बार पिताजी ने उसे बहुत दूर जंगल में छोड़ा और ठीक उल्टा रास्ता पकड़ कर, पहाड़ को पार करते हुए घर लौटे।

चार दिन बीत गए। दियांका फिर वापस आ गई—थकी, भूखी और खरोचों से भरी हुई। ऐसा लगता था कि वो भटक गई थी, पर किसी तरह घर का रास्ता ढूँढ़ निकाला।

दूसरे शहर नहीं जाना होता तो पता नहीं सब कब तक चलता। अब हमारे सामने समस्या थी कि हम अपने पालतू जानवरों का क्या करें।

स्वाभाविक था कि मैं सबसे ज्यादा दियांका के लिए परेशान थी। मैं लगातार उसी आदमी के बारे में सोचती रही जिसकी कहानी पिताजी ने सुनाई थी कि कैसे उसने अपने भेड़िये को नींद की दवा दे दी थी। मैंने कुछ ऐसे घर ढूँढ़ने की पूरी कोशिश की जहाँ दियांका की अच्छी देखभाल हो सके और वो वैसे ही खुश रह सके जैसे वो हमारे साथ थी।

और अचानक सब कुछ इतना अच्छा हो गया कि जैसे हमने कभी सोचा भी नहीं था।

हमारे गाँव में और उसके चारों तरफ के इलाके में पिछले छह महीने में बहुत चोरियाँ हो रहीं थीं। चोर दियांका, घोड़ों और गायों को चुराकर भाग जाते, और कोई नहीं जान पाता कि चोरों ने उनका क्या किया। कई शानदार पुलिस के कुत्ते वहाँ लाए गए। एक जासूस को इन चोरों का पता लगाने की जिम्मेदारी सौंपी गई।

मैंने और पिताजी ने इन कुत्तों को देखा था। उनके लिए एक बड़ा मैदान था, जिसमें ढेर सारे पेड़ लगे थे। एक-एक कुत्ते को अपना अलग घर मिला हुआ था। उन्हें अच्छा भोजन मिलता था। और किसी को उन्हें तंग करने की इज़ाज़त नहीं थी।

ये कुत्ते बहुत ज्यादा भेड़ियों के समान दिखते थे। मेरे दिमाग में अचानक एक तरकीब सूझी, क्यों न हम उनसे दियांका को ले लेने को कहें? मैंने यह बात पिताजी को कही और उन्होंने वहाँ के प्रमुख से बात की।

उस आदमी ने आश्चर्य से कहा, "भेड़िया? वो भी पालतू? ओह! ये मेरी जिन्दगी का सपना था! उसे अभी लेकर आओ। इसकी खोज में ही मैं हमेशा से था!"

दियांका को एक पुलिस कुत्ते के साथ रखा गया जिसका नाम बुल्फ था, गाँव छोड़ने से पहले मैं हर दिन दियांका को देखने जाती। वो खुश और तन्दुरुस्त हो गई थी। मुझसे बहुत प्यार से मिलती। अब मैं निश्चिन्त थी और आराम से जा सकती थी क्योंकि अब मुझे पता था कि दियांका खुश है।

अनुवाद : लता

महान देश का महान लेखक—चेखव

बच्चो, पिछले अंक से हम एक नया कॉलम शुरू कर रहे हैं, जिसके अन्तर्गत विश्व के विभिन्न क्षेत्रों के महत्वपूर्ण हस्ताक्षरों के जीवन व कृति से आपको परिचित करायेंगे। साहित्य के क्षेत्र में अपनी आभा से पूरे संसार को आलोकित करने वाले ऐसे ही महान लेखक हुए हैं ***अन्तोन चेखव।*** *इस बार हम उनकी जीवनी प्रकाशित कर रहे हैं। यह जीवनी 1976 में नीलाभ प्रकाशन से छपी थी और इसका सम्पादन (महान लेखक बाल जीवनी माला) जाने-माने उपन्यासकार, नाटककार और कवि उपेन्द्रनाथ अश्क ने किया था। हम वहीं से इसे साभार लेकर दूसरा भाग प्रस्तुत कर रहे हैं—सम्पादक*

बच्चो, पिछले अंक में तुमने रूस के महान लेखक अन्तोन पावलोविच चेखव के जीवन की एक झलक देखी। चेखव बहुत ही गरीब घर में पैदा हुए थे। उनके बाबा और पिता रूस के बहुत बड़े जमींदार के गुलाम थे, जिनके साथ पशुओं की तरह व्यवहार किया जाता। बच्चे आँख खुलते ही गुलाम होते, पिता के कर्ज को चुकाते-चुकाते उनका दरिद्र, गुलाम जीवन खत्म हो जाता। गुलामी बहुत ही बुरी होती है। अमेरिका के राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन को तो गुलामी को हटाने के लिए अपनी जान तक देनी पड़ी। चेखव के बाबा और पिता ने अपनी मेहनत और सूझबूझ से अपने को परिवार सहित गुलामी के बन्धन से छुड़ा लिया। चेखव ने आजीवन अथक परिश्रम किया। उन्होंने अपने पिता और अध्यापकों की सनकों और पिटाई को धैयपूर्वक सहन किया, लेकिन अपने भाइयों की तरह न वे बिगड़े, न जिम्मेदारियों से भागे। धर्म के दिखावे और समाज विरोधी बातों का वे अपनी मजबूत कलम-नवीसी के बल पर खूब मजाक उड़ाते थे। वे चुपचाप तरह-तरह के नामों से लिखते रहे—लिखते रहे... उनकी कहानियाँ और नाटक बहुत ही मार्मिक और मनोरंजक होते। यह संघर्षशील लेखक जो दूसरों को अपनी-अपनी रचनाओं से हँसा-हँसाकर लोट-पोट करता था, खुद छोटी उमर में ही बड़े-बूढ़ों की तरह गम्भीर बन गया। लेखक को न जाने कितनी इच्छाओं को दबाना पड़ा। अब आगे पढ़े—सम्पादक

दूसरा भाग

असली रचनाएँ

पहले चेखव सिर्फ रुपया कमाने के लिए लिखते थे। अखबार वाले जिस तरह की रचनाएँ चाहते, वे लिख देते। वे अपनी पढ़ाई खत्म करके एक डॉक्टर के रूप में सफलता पाना चाहते थे। डॉक्टर बनकर आमदनी का एक साधन हो जाने के बाद वे अपने मन की कुछ चीज़ें लिखना चाहते थे।

उनके दिल में दीन-दुखियों के लिए बड़ी जगह थी। वे उन्हीं के दुख-दर्द की कहानियाँ लिखना चाहते थे। ऐसी कहानियाँ, जो लोगों को सिर्फ हँसाये ही नहीं, उन्हें सोचने के लिए मजबूर भी करें।

वे चाहते थे कि लोग इंसान का आदर करना सीखें और झूठी शान बघारना छोड़ दें। वे चाहते थे कि कोई किसी से गुलामों जैसा बर्ताव न करे। गुलामी की भावना को लोगों के दिलों से वे एकदम निकाल फेंकना चाहते थे। अपनी मजाकिया कहानियों में वे चुपके से इन बातों को भर देते।

वह ऐसा समय था, जब रूस की सरकार पत्र-पत्रिकाओं पर कड़ी निगाह रखती थी। उनमें ऐसी ही रचनाएँ छप सकती थीं, जो किसी भी तरह सरकार या उसकी नीतियों के खिलाफ न हों।

इसलिए ज्यादातर पत्र-पत्रिकाओं में ऐसे ही चुटकुले-कहानियाँ और लेख वगैरह छपते थे, जिनमें मामूली

अफसरों, क्लर्कों और साधारण तबके के लोगों पर छींटा कसा गया होता था। कुछ मिलाकर उनमें सस्ते और भौंड़े किस्म के मजाक के अलावा कुछ नहीं होता था।

चेखव ने पीटर्सबर्ग के एक मशहूर सम्पादक—निकोलाई लीक्सिन से दोस्ती गाँठ ली थी और वे अधिकतर उसी के पत्र में लिखते थे। लीक्सिन कभी खुद बहुत अच्छा लेखक था। लेकिन बाद में वह पक्का व्यापारी बन गया था। वह अपने पत्र में ऐसी ही रचनाएँ छापता, जिनसे सरकार तनिक भी नाराज न हो।

चेखव की रचनाओं को जनता पसन्द करने लगी थी, इसलिए काम का आदमी समझकर, लीक्सिन ने उन्हें फाँस लिया था। वह चेखव को कोरी हँसी-मजाक की रचनाएँ ही लिखने का बढ़ावा देता। उनकी रचनाएँ ऊपर से देखने पर तो उस समय के दूसरे मामूली लेखकों की तरह ही होतीं। पर ध्यान से देखने पर फर्क का पता चल जाता।

चेखव की ऐसी रचनाओं से लीक्सिन बहुत घबराता था। उनमें सरकारी रीति-नीति और बुरी परम्पराओं का छिपे तौर पर मज़ाक उड़ाया जाता। वह उन्हें डराता-धमकाता कि तुम्हारी इस तरह की रचनाओं को लोग पसन्द नहीं करते और अगर तुम सँभलोगे नहीं तो एक लेखक के रूप तुम अपनी ख्याति खो बैठेंगे।

विवश होकर चेखव को वैसी रचनाएँ लिखनी पड़तीं, जैसी लीक्सिन चाहता था। लेकिन बेध्यानी में कभी-कभार लीक्सिन चेखव की ऐसी रचनाएँ भी छाप देता, जो लोगों को हँसाने के साथ-साथ सोचने पर भी मजबूर कर देतीं।

लीक्सिन के लिए चेखव को छोटी-छोटी रचनाएँ ही लिखनी पड़ती थीं। इसलिए जितना कुछ वे कहना चाहते थे, कह नहीं पाते थे। लेकिन इसका एक लाभ भी हुआ। उन्हें गागर में सागर भरने का हुनर आ गया। और अपनी बेहद छोटी कहानियों के रूप में उन्होंने साहित्य को एक नयी चीज़ दी।

साधारण जनता उनकी इस तरह की रचनाओं को बेहद पसन्द करती थी, क्योंकि इनमें साधारण जनता की दुख-तकलीफों का चित्रण होता था। केवल वही लोग चेखव की रचनाओं को पसन्द नहीं करते थे, जो सरकार के पिट्ठू थे। वे ऐसी रचनाएँ पसन्द करते थे, जिनमें जार और उसके अफसरों और दरबारियों वगैरह की तारीफ हो।

चेखव अपनी रचनाओं में उनकी तारीफ करने की बजाय उनका मजाक उड़ाते थे। 'गिरगिट' और 'क्लर्क की मौत' चेखव की दो बहुत मशहूर कहानियाँ हैं। इनमें सरकारी अफसरों के रौब और झूठी शान का सच्चा चित्र खींचा गया है।

दो महान कहानियाँ

'गिरगिट' बड़ी मजेदार कहानी है। एक पुलिस का दारोगा तड़के कहीं जा रहा होता है। रास्ते में भीड़ देखकर रुक जाता है। लोगों को डाँट-फटकार कर वह अपने लिए रास्ता बनाता है। वहाँ उसे पता चलता है कि खूकिन नाम के बढ़ई को कुत्ते ने काट लिया है। खूकिन ने उस कुत्ते के मुँह पर जलती हुई सिगरेट छुआ दी थी। दारोगा रोबदार आवाज़ में कुत्ते के मालिक का पता लगाने और कुत्ते को तुरन्त मरवा डालने का हुक्म देता है। साथ ही वह बड़े जोर-शोर से यह कहता है कि बढ़ई को कानून के अनुसार हरजाना मिलना चाहिए। तभी भीड़ में से एक आदमी कहता है कि कुत्ता तो जनरल जिगालोव का है।

यह सुनते ही दारोगा झट रुख बदलता है और बढ़ई को फटकारने लगता है कि तेरी ही बदमाशी से कुत्ते ने तुझे काटा होगा। तभी साथ का सिपाही कहता है कि ऐसी मामूली सूरत-शक्ल का कुत्ता जनरल साहब का नहीं हो सकता। दारोगा फिर खूकिन के प्रति उदार हो उठता है और उसे सलाह देता है कि कुत्ते के मालिक के खिलाफ उसे कानूनी कार्रवाई जरूर करनी चाहिए।

तभी सिपाही फिर शंका व्यक्त करता है कि इसके माथे पर तो कुछ लिखा नहीं, हो सकता है यह जनरल साहब का ही हो। दारोगा फिर खूकिन को डाँटने लगता है कि तुमने कुत्ते के मुँह में जलती सिगरेट छुलाकर बहुत बुरा किया है।

इसी समय जनरल साहब का बावर्ची उधर से निकलता है और बताता है कि कुत्ता उनके यहाँ का नहीं है। दारोगा फिर रुख बदलना चाहता है कि तभी बावर्ची कहता है कि यह जनरल साहब के भाई का है, जो नये-नये यहाँ आये हैं। दारोगा यह सुनकर कुत्ते के प्रति तुरन्त ममता दिखाता है और उसकी सुन्दरता की तारीफ करने लगता है। बावर्ची कुत्ते को लेकर चला जाता है तो लोग खूकिन पर हँसने लगते हैं। दारोगा भी अपना लबादा समेटता है और खूकिन को आड़े हाथों लेने की धमकी देता हुआ चला जाता है।

यह कहानी ऊपर से हल्की-फुल्की लगती है, लेकिन चेखव ने इसमें अफसरशाही की अच्छी खबर ली है। थोड़ी-थोड़ी देर में गिरगिट की तरह दारोगा जितने रंग बदलता है, उससे यह साफ पता चल जाता है कि कानून-कायदे सिर्फ जनता को दबाने के लिए है। अफसरों के सात खून भी माफ हैं। दारोगा जैसे पुलिस के बड़े अफसर भी अपने से ऊँचे अफसरों से किस तरह डरते हैं, इसका बड़ा सुन्दर चित्र चेखव ने इसमें खींचा है।

'क्लर्क की मौत' भी पढ़ने में जितनी हल्की-फुल्की कहानी लगती है, उससे कहीं अधिक गहरी और दर्द भरी है।

एक क्लर्क नाटक-घर में आगे के दर्जे की दूसरी पंक्ति में बैठा, मजे से नाटक देख रहा होता है कि एकाएक उसे छींक आ जाती है। उसकी निगाह सामने बैठे एक बहुत बड़े अफसर पर पड़ती है। वह देखता है कि अफसर रूमाल से अपना गंजा सिर पोंछ रहा है। क्लर्क को लगता है कि उसके छींकने से कुछ छींटे अफसर के सिर पर जा पड़े हैं। वह बेहद घबरा जाता है।

वह झुककर माफी माँगने की कोशिश करता है, लेकिन अफसर उसे चुपचाप नाटक देखने को कहकर डाँट देता है।

इससे क्लर्क और भी घबरा जाता है। उसे लगता है कि वह अफसर जरूर उससे नाराज हो गया है और उसके खिलाफ कोई कदम उठायेगा। इण्टरवल होने पर वह फिर माफी माँगने की कोशिश करता है। लेकिन अफसर उसकी बात को सुनता ही नहीं, जैसे कुछ हुआ ही न हो। बेचारे क्लर्क को इससे सन्तोष नहीं होता। उसे लगता है कि अफसर ने अपने मन में वह बात रख ली है। मौका पाकर वह उसे जरूर सजा देगा। घर पहुँचने पर वह अपनी पत्नी से इस घटना की चर्चा करता है। पत्नी उसे सलाह देती है कि वह अफसर के दफ्तर में जाकर माफी माँग आये। वह अफसर के दफ्तर पहुँच जाता है। अफसर काम में व्यस्त है। वह क्लर्क की बात ठीक से सुने बिना ही उसे दफ्तर से चले जाने को कह देता है।

अब, क्लर्क पत्र लिखकर माफी माँगने का विचार

करता है। लेकिन फिर अपना इरादा बदलकर अफसर के घर पहुँच जाता है। माफी माँगने के लिए वह एक साँस में ढेर सारी बातें कह जाता है।

अफसर उसके इस तरह परेशान करने पर झुँझला जाता है। उसे समझ में नहीं आता कि यह क्लर्क उसे इतना परेशान क्यों कर रहा है। (शायद उसके सिर पर क्लर्क के छींकने से छींटे पड़े ही नहीं।) अफसर उसकी बातों पर कुछ भी ध्यान न देकर, उसे बुरी तरह से डाँटकर भगा देता है।

इससे वह क्लर्क इतना डर जाता है कि गिरता-पड़ता किसी तरह घर पहुँचता है और सोफे पर गिरकर मर जाता है।

चेखव ने अपनी इस कहानी में दिखाया कि अफसर ने क्लर्क के छींकने को बहुत मामूली बात समझा था, शायद उस पर क्लर्क के छींकने से छींटे पड़े ही नहीं थे। लेकिन बेचारा क्लर्क अफसर की नाराजगी की बात सोचकर ही बेचैन हो उठा। उसके अन्दर समाये हुए भय ने उसे इतना डरा दिया कि वह मर ही गया। चेखव ने अपने समय की अफसरशाही पर करारी चोट की थी। उन्होंने दिखाया कि बड़े अफसरों से छोटे अफसर और क्लर्क, आदि कितना डरते थे।

ऐसी थी चेखव की काट करने वाली कलम, जो हँसी-मजाक के रूप में चोट करना भी जानती थी।

सफलता मिली : तन्दुरुस्ती की कीमत पर

अपनी रचनाओं से घर वालों का और अपना खर्च चलाते हुए चेखव ने 1884 ई. में डॉक्टरी की परीक्षा पास कर ली। उसी साल गर्मियों में मास्को से थोड़ी ही दूर पर एक बड़े सरकारी अस्पताल में उन्हें नौकरी मिल गयी।

इससे ऐसा लगा कि उनके दुख के दिन अब बीत गये, लेकिन ऐसा हुआ नहीं। चेखव ने इस बीच लगातार कड़ी मेहनत करके अपनी तन्दुरुस्ती ख़राब कर ली थी। उसी साल, जब वे मास्को में थे तो उनके मुँह से खून गिरा था। यह तपेदिक की पहली निशानी थी। बच्चो, तपेदिक फेफड़ों का रोग होता है। इसमें खाँसी और बुखार आता है। अन्त में आदमी बेहद दुबला होकर मर जाता है। अब तो इसका इलाज होने लगा है, लेकिन पहले इसके रोगी बचते नहीं थे। इस पर भी चेखव ने तपेदिक के इस चिन्ह की परवाह नहीं की। वे फिर अपने काम-धन्धे में जुट गये।

1886 में एक ऐसी घटना हुई, जिससे चेखव का पूरा जीवन ही बदल गया। एक दिन अचानक चेखव को रूस के एक बहुत बड़े लेखक ग्रिगोरोविच का पत्र मिला।

ग्रिगोरोविच ने चेखव की बड़ी तारीफ की थी और सलाह दी थी कि वे अखबारों में चुटकुले, लतीफे और मज़ाकिया कहानियाँ लिखकर अपनी काबिलियत को बरबाद न करें। अगर वे अच्छी चीज़ें लिखने की ओर ध्यान देंगे तो एक दिन वे रूस के बहुत बड़े लेखक बन जायेंगे।

यह पत्र पाकर खुशी के मारे चेखव का बुरा हाल हो

गया। इसके पहले किसी लेखक ने चेखव की इतनी तारीफ़ नहीं की थी। अभी तक चेखव ने डॉक्टरी को ही अपना पेशा बनाने का इरादा कर रखा था। वे तो शौक के लिए या रुपया कमाने के लिए लिखते थे।

लेकिन इस पत्र को पाने के बाद उन्होंने अनुभव किया कि उनका असली पेशा लेखक का ही है। फिर तो उन्होंने एक से एक बढ़कर कहानियाँ लिखीं। बहुत थोड़े अरसे में वे रूस के एक बड़े लेखक माने जाने लगे। अब मज़ाकिया पत्र-पत्रिकाओं वाले भी लतीफों, चुटकुलों और हल्की कहानियों के बजाय अच्छी कहानियों की माँग करने लगे।

जीवन का अनुभव

बच्चो, पढ़ाई खत्म करने के बाद चेखव को तरह-तरह से लोगों के जीवन को बड़े नजदीक से देखने का मौका मिला। अस्पताल में आस-पास के बहुत-से किसान मरीज आते थे, जो चेखव से अपने सुख-दुख की कितनी ही बातें करते। चेखव बड़ी ही हमदर्दी से उनकी बातें सुनते और उनको ठीक सलाह देते।

अस्पताल के जीवन को भी चेखव ने बड़ी गहराई से देखा। डॉक्टर होने के नाते कभी-कभी उनको हत्या, मार-पीट और लड़ाई के मुकदमों में गवाही देने भी जाना पड़ता। उन्होंने अदालती जीवन को भी खूब बारीकी से देखा-परखा।

गर्मियों की छुट्टियों में वे पास ही के एक दूसरे कस्बे में चले जाते थे। वहाँ उनका भाई ईवान एक छोटे-से स्कूल में पढ़ाता था। फिर छुट्टी खत्म होने लगती तो वे अपने एक लेखक दोस्त के यहाँ चले जाते। यह दोस्त एक ज़मींदार था।

इन दोनों जगहों पर उन्हें तरह-तरह के खूबसूरत नज़ारे भी देखने को मिलते। आगे चल कर उन्होंने अपनी रचनाओं मे इन सब का चित्र बड़ी ही ख़ूबी से उतारा। इस बीच उन्होंने किसानों, ज़मींदारों, अफ़सरों, फ़ौजियों, डाक्टरों, आदि कितने ही तरह के लोगों के जीवन को बड़े नज़दीक से देखा। उन्होंने इस जीवन का खूब बारीकी से अध्ययन किया। उन्होंने कितनी ही कहानियों और नाटकों के कथानक लिखे।

समय-समय पर चेखव पीटर्सबर्ग और मास्को भी जाते रहते थे। उनको बड़े शहरों के जीवन का भी काफी अनुभव हो गया। जैसे-जैसे उनका अनुभव बढ़ता जाता, वैसे-वैसे वे एक से बढ़कर एक नयी-नयी तरह की रचनाएँ लिखते जाते। अब उन्होंने अनुभव करना शुरू किया कि उनके लिए डॉक्टरी छोड़कर पूरी तरह लेखक का पेशा अपना लेना ही ठीक होगा।

वे देख रहे थे कि लेखक के रूप में वे दीन-दुखियों की अधिक सेवा कर सकते थे। अपनी रचनाओं में वे भूले हुओं को रास्ता बता सकते थे और निराश लोगों को हिम्मत बँधा सकते थे।

इतना अधिक नाम हो जाने पर भी चेखव को अभिमान छू तक नहीं गया था। 1888 में उनको पुश्किन पुरस्कार मिला। बहुत-से लोगों ने उन्हें बधाई दी। लेकिन चेखव ने इसे बहुत महत्व नहीं दिया। वे तो साहित्य में अपने आपको अब भी एक नौसिखिया मानते थे और इसीलिए डॉक्टरी करने और लिखने के अलावा वे हमेशा नयी-नयी चीज़ें पढ़कर अपना ज्ञान बढ़ाने की कोशिश करते रहते।
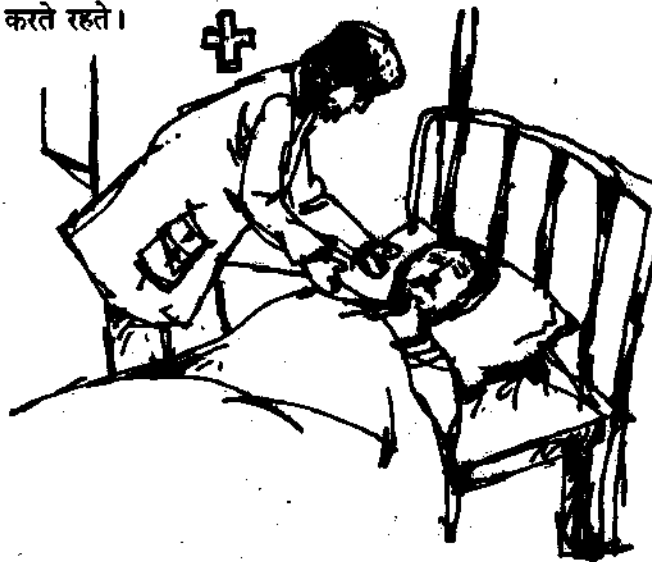
वे कितने ही नये लेखकों की हिम्मत बढ़ाते थे। साहित्य को वे किसी एक व्यक्ति का नहीं, बल्कि एक पूरी टोली का मिला-जुला काम मानते थे। अपने दोनों बड़े भाइयों को भी वे सुधारने की कोशिश करते। सबसे बड़े भाई योग्य, विद्वान और अच्छे लेखक थे और उनसे छोटे निकोलाई कुशल चित्रकार।

ये दोनों हमेशा अपनी बदकिस्मती का ही रोना रोते रहते थे। उनका कहना था कि दुनिया वाले गुणों की कदर नहीं करते। चेखव ने अपने इन दोनों भाइयों को लगातार मेहनत और लगन से काम करने की सलाह दी।

काम में ढिलाई करने की आदत से बड़े-से-बड़ा गुण भी किसी काम का नहीं रह जाता। हर गुणी आदमी को चाहिए कि वह धीरे-धीरे अपने मन पर काबू पाये और मेहनत से काम करने की आदत डाले। चेखव ने स्वयं एक बार कहा था कि मैं ही अपने मन का सारथी हूँ। मैंने अपने मन को इस तरह अपने बस में किया है, जैसे कोई आदमी जंगली जानवर को बस में करता है।

चेखव ने बहुत-सी ऐसी कहानियाँ लिखीं, जिनमें उन्होंने यह दिखाया कि गुण तभी किसी काम का है, जब लगातार मेहनत से उनको साधा जाय।

चेखव जब सोलह बरस के थे, तभी से उन्होंने काम करने की आदत डालनी शुरू की और पच्चीस साल के होते-होते वे इस हुनर को पूरी तरह सीख गये। वे कभी एक मिनट के लिए भी अपना समय बरबाद नहीं करते थे। यहाँ तक कि हँसते, बोलते, चलते और खेलते समय भी वे बराबर सोचा करते थे। इस तरह वे हमेशा नयी-नयी बातें सीखने की कोशिश किया करते थे और काम की चीज़ें तुरन्त अपनी डायरी में लिख लेते थे।

अब वे अपने परिवार के लोगों के साथ मास्को की एक गली में एक बड़े दुमंजिले मकान के छोटे-से हिस्से में रहने लगे थे। यह मकान पूरा कबूतरखाना था, जिसमें तरह-तरह के लोग भरे हुए थे। दिन-रात उसमें किसी-न-किसी तरह का हल्ला-गुल्ला मचा रहता था और उसी शोर-शराबे के बीच चेखव को बैठकर लिखना पड़ता था। लेकिन बच्चो, चेखव इन लोगों के जीवन को ध्यान से देखते। फिर, वे अपने अनुभवों को अपनी रचनाओं में लिखते।

चेखव के ये दिन बड़ी हँसी-खुशी से बीत रहे थे। कितने ही मशहूर लोग उनसे मिलने आते और उनकी रचनाओं की तारीफ करते। कहानियाँ वगैरह लिखने या नाटकों में हिस्सा लेने वाले नयी उमर के लड़के- लड़कियाँ उन्हें घेरे रहते। चेखव खुद भी खुश रहते और दूसरों को भी कठिनाइयों के बीच से अपना रास्ता बनाते हुए खुश रहने की सलाह देते।

इसी बीच चेखव की दोस्ती एक बड़े ही मक्कार आदमी से हो गयी। उसका नाम सुबोरिन था। पहले वह बहुत ग़रीब था, लेकिन धीरे-धीरे अपनी चालाकी से लखपति बन गया था। वह लेखक भी था और एक बड़े अखबार का मालिक भी।

अपनी रचनाओं में वह बड़ी ऊँची-ऊँची बातें लिखता था। लेकिन उसका अखबार पूरी तरह सरकार का पिट्ठू था। चेखव को उस अखबार में लिखना अच्छा नहीं लगता था। वे सुबोरिन की दोस्ती का ख्याल करके मजबूरन लिखते थे। वे सुबोरिन को एक भला आदमी समझते थे, क्योंकि उसके अखबार में जो कुछ निकलता था, उसके लिए वह अपने अखबार के नौकरों को ही जिम्मेदार बताता था।

लेकिन बात ऐसी थी नहीं। वह अखबार पूरी तरह उसी के इशारे पर चलता था। इस तरह वह जनता का हमदर्द भी बना रहता था और सरकारी अफसर भी उससे खुश रहते थे। चेखव को भी वह बहकाने की कोशिश करता था; वह सलाह देता कि ऐसी चीज़ें लिखो, जो मज़ेदार तो हों, लेकिन किसी के खिलाफ न हों।

उस अखबार में लिखने के कारण चेखव की बदनामी भी होती थी। लेकिन बहुत दिनों तक वे सुबोरिन का साथ छोड़ने को तैयार न हुए। आखिर जब उनकी आँखें खुलीं तो उन्हें इस बात का पछतावा भी हुआ। लीक्सिन और सुबोरिन, दोनों ने उन्हें ग़लत राह पर लगाने की काफी कोशिश की, लेकिन चेखव इन दोनों बदमाशों के फन्दे से साफ निकल आये। अपने दोनों बड़े भाइयों को

भी उनके चंगुल से बचने की सलाह उन्होंने दी।

निकोलाई

1889 की गर्मियाँ चेखव ने अपने परिवार के साथ यूक्रेन में बितायी। यूक्रेन के सीधे-सादे लोग और प्राकृतिक सुन्दरता उन्हें बहुत पसन्द आयी। यूक्रेन रूस का एक प्रान्त है।

लिखने-पढ़ने से समय मिलता तो वे अपनी बंसी लेकर मछली पकड़ने निकल पड़ते। इस खेल में वे बड़ा मजा लेते। लेकिन यह सारी खुशी उनके भाई निकोलाई की बीमारी के कारण शोक में बदल गयी।

निकोलाई बहुत अच्छा चित्रकार था, लेकिन वह बहुत शराब पीता था। बच्चो, तुम तो जानते ही हो, शराब अच्छी चीज नहीं। यह आदमी को निकम्मा बना देती है। निकोलाई की तन्दुरुस्ती बहुत खराब हो गयी। चेखव ने समझ लिया कि निकोलाई का जीवन-दीप अब बुझने ही वाला है। फिर भी उन्होंने दवा-दारू का पूरा इन्तजाम किया। भाई की सेवा में वे दिलोजान से लगे रहे।

निकोलाई की मृत्यु से चेखव को बहुत गहरा धक्का लगा। वे अपने दोनों बड़े भाइयों को बहुत प्यार करते थे। बचपन में तीनों ने सुख-दुख के कितने ही ऐसे क्षण साथ बिताये थे, जो उन्हें अब भी याद थे। निकोलाई की मृत्यु से उन्हें ऐसा लगा, जैसे उनके चारों ओर सूनापन और भी अधिक हो गया हो।

इस सारे संघर्ष में वे अपनी बीमारी को भूले हुए थे। पिछले पाँच वर्षों में कई बार उनके मुँह से खून गिर चुका था। अक्सर उन्हें अपने थूक में खून के कतरे दिखायी देते। लेकिन वे कभी अपनी बीमारी पर ध्यान नहीं देते थे। अगर कोई उनका ध्यान इस खतरनाक बीमारी की ओर खींचता भी तो वे यह कह कर टाल देते कि कोई परेशानी की बात नहीं है। अगर बीमारी ऐसी ही खतरनाक होती तो मैं कब का मर चुका होता।

लेकिन बच्चो, निकोलाई की मृत्यु के बाद उन्हें अपने आप को धोखा देना कठिन हो गया। उनके सामने अब यह साफ हो गया कि उनका भी अन्त वही होने जा रहा है, जो निकोलाई का हुआ। फिर भी चेखव निराश नहीं हुए। उन्होंने हिम्मत को अपने हाथ से नहीं जाने दिया। उन्होंने निश्चय कर लिया कि अपने अन्तिम दिन तक वे लिखते रहेंगे।

बच्चो, चेखव यह जानते थे कि उनकी बीमारी ठीक नहीं होगी। लेकिन फिर भी वे काम में लगे रहे। यह बहुत साहस का काम था। लोग जरा-सी बीमारी में निराश हो जाते हैं। घबरा जाते हैं। लेकिन चेखव साधारण लोगों में से नहीं थे।

(शेष अगले अंक में)

त्रिलोचन की कविता

चित्रा जाम्बोरकर

नन्हें नन्हें हाथों ने
पकड़ लिया मेरा हाथ
और शेकहैण्ड किया
चेहरे पर हँसी
और
रोम रोम में फुर्ती
हँसी पकड़ लेती है
मैं भी हँसा
पूछा
तुम्हारा नाम
उसने कहा
चित्रा जाम्बोरकर
इशारा किया एक छोटे बच्चे की ओर
कहा
मेरा छोटा भाई है
रवीन्द्र जाम्बोरकर
उसको संकोच
आगे बढ़ने नहीं देता था
एक पाँव बढ़ाकर
मैंने हाथ मिलाया
मेरी हँसी देख कर वह भी हँसा
चित्रा से मैंने कहा
चित्रा जाम्बोरकर
आज से हम मित्र हैं
उसने भी हँसते हुए मुझसे कहा
अब हम मित्र हैं

दोनों भाई-बहन
खेलने में लग गए
मैं अपने घर आया
लेकिन आज
मन खाली नहीं था
चित्रा बस गयी थी
जैसे राह की मेंहदी
नासिका से होती हुई
फेफड़ों में प्रायः बसा करती है

आजकल का ढंग ही विचित्र है
हमारे घर
जितने ही निकट निकट होते हैं
उतने ही दूर दूर
हमारे मन
होते हैं
यानी लगे हुए हम
कितने अलग अलग हैं
मेरे अलगाव को
गिराती हुई
मुझे मिली
चित्रा जाम्बोरकर
और वह अलगाव
मेरा घरौंदा था
खेलने के बाद ही घरौंदे को
बच्चे गिरा देते हैं

चित्रा
जब मुझे पहले-पहल मिली
लेकिन वह
मुझे कहाँ मिली
उसने मुझे पा लिया
मेरा हाथ
अपनी हथेलियों में ले लिया
और कुछ दबाती रही
मैं थोड़ा चौंका था
मेरी चौंक चली गयी
और हँसी आ गयी
हँसी मिला जाती है
हृदय को हृदय से
मिलाने के लिए हँसी
सेतु है
चित्रा
मुसकराती रही
और
फिर
हँसती हुई मुझे देखती रही
खेलने वाले बच्चे
उसे खींच ले गए
जाते जाते भी वह
उसी तरह
मुझे देख देख कर
हँसती रही

यह नया अनुभव था
इसको अकेले ही
लिये रहना मेरे लिए
कठिन था
घर में मैंने कहा
थोड़े विस्तार से
पत्नी को सुन कर आनन्द हुआ
आनन्द से सदा
आनन्द होता है
यदि आदमी का मन
बँधा नहीं खुला हो
पूछ दिया
लड़की का नाम क्या है
मैंने कहा
यह तो पूछा ही नहीं मैंने।

उन्होंने कहा
अबकी पूछ लेना यह
बिना नाम दिये कोई
आनन्द निराकार होता है
मैंने सोचा
मुझे नाम पाना है
जो मैंने जाना है
उसको यदि दूसरे भी जानते हैं
तो वे क्या कहते हैं
अपने एकान्त से
क्या भाषा लेकर
संवाद सबसे करते हैं

चित्रा ने
अभी दिन
अधिक नहीं पहचाने
अभी तीन चार बरस
की होगी
लेकिन पहचान को
बढ़ाने में
उलझन उसे
कोई नहीं
पहले दिन
जब उसने
मुझे रोक लिया था
तब उसका हँसलोना मुँह

मैंने देखा था
मुझे लगा
बच्ची नहीं
मुझे उसकी हँसी
रोक रही है
और
मैं रुक गया
मेरा हाथ
उसकी हथेलियों
में पड़ा था
मेरे पाँव रुक गये
हँसी केवल हँसी
हमें जोड़ रही थी
मैं तो टूटा टूटा था
मुझे यही जान पड़ा
जब उसने
मेरा हाथ छोड़ दिया
आगे बढ़ते हुए
मैंने उसे
मुसकराहट लिये हुए
कई बार कई बार देखा
देखता हुआ मैं
आगे बढ़ता रहा
देखा उसकी हँसी
मेरा पीछा कर रही है
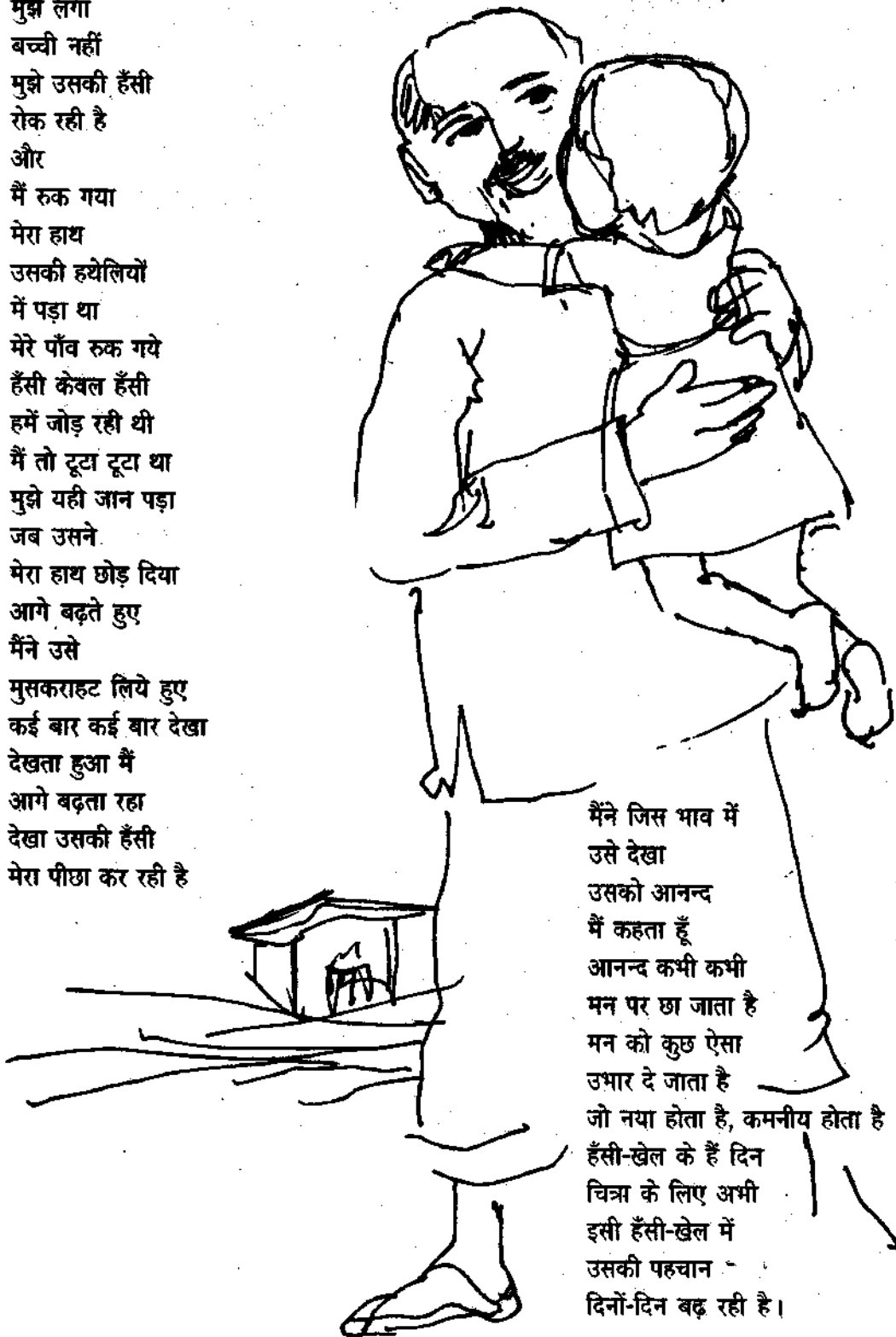
मैंने जिस भाव में
उसे देखा
उसको आनन्द
मैं कहता हूँ
आनन्द कभी कभी
मन पर छा जाता है
मन को कुछ ऐसा
उभार दे जाता है
जो नया होता है, कमनीय होता है
हँसी-खेल के हैं दिन
चित्रा के लिए अभी
इसी हँसी-खेल में
उसकी पहचान
दिनों-दिन बढ़ रही है।

लेनिन का बचपन

अन्ना उल्यानोवा

लेखिका का परियय : अन्ना उल्यानोवा (1864-1935) लेनिन की बहन। रूसी क्रान्तिकारी एवं सोवियत राजनेत्री। लेनिन के ऊपर लिखा गया उनका संस्मरण—"लेनिन का बचपन और युवावस्था" बहुत लोकप्रिय हुआ, इससे हमें क्रान्ति के महानायक (लेनिन) के बचपन और युवावस्था को समझने में मदद मिलती है, इससे पता चलता है कि वह क्या माहौल था जिसने उन्हें इतना महान बनने में मदद की। प्रस्तुत संस्मरण भी उसी पुस्तिका का एक अंश है।
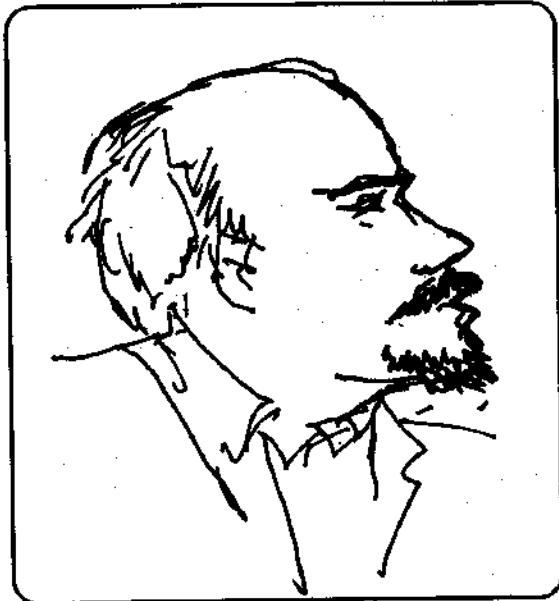
व्लादिमीर इल्यीच उल्यानोव (लेनिन) का जन्म 22 अप्रैल 1870 को 'सिमब्रिस्क' के एक वोल्गाई कस्बे में हुआ, बाद में इसे उनके सम्मान में उल्यानोवस्क" कर दिया गया।

उस समय व्लादिमीर के पिता 'इल्या निकोलायविच' सिमब्रिस्क गुबेरनिया (जिला-अनु.) में एक स्कूल निरीक्षक थे। वे साधारण लोगों के बीच से आये थे और अपने पिता को बचपन में ही खो चुके थे, अपने बड़े भाई की सहायता से ही वे शिक्षा प्राप्त कर पाये थे। विश्वविद्यालय की शिक्षा समाप्त करने के बाद उन्होंने 'पेंजा' में अध्यापन किया, उसके पश्चात् 'निझनी-नोवगोरोद' में। वे अपने शिष्यों के चहेते थे, कभी उन्हें सजा नहीं देते थे या कभी उनकी शिकायत प्रधानाचार्य से नहीं करते थे। एक शिक्षक होने के नाते वे हमेशा सहनशील रहते थे, अपने पाठों को समझने में आसान बनाया करते थे, और रविवार को अपने उन शिष्यों को मुफ्त शिक्षा दिया करते थे जो पढ़ाई में कमजोर थे या जिनके घर पर उनकी समस्याएँ सुलझाने वाला कोई भी नहीं होता था। बाद में उनके शिष्य उन्हें प्यार और कृतज्ञता से याद किया करते थे। सिमब्रिस्क में उन्होंने गरीब, किसान बच्चों के लिये बहुत से विद्यालय खोलने का प्रयत्न किया था और इसके लिए अपना समय, ऊर्जा और स्वास्थ्य लगा देने में उन्हें अनिच्छा नहीं हुई, हर मौसम में वह गुबेरनिया के विभिन्न इलाकों का दौरा किया करते थे।

मारिया अलेक्सांद्रोवना, व्लादिमीर की माँ एक चिकित्सक की पुत्री थीं; उनके यौवन का अधिकांश भाग गाँव में ही बीता, पड़ोस के किसान उनके प्रति वफादार थे। वे बहुत संगीत-प्रेमी थीं और विदेशी भाषाएँ जानती थीं—फ्रेंच, जर्मन और अंग्रेजी—और इन सब हुनरों को अपने बच्चों को सिखाया करती थीं। वे सामाजिक त्योहारों और मनोरंजन की परवाह नहीं किया करती थीं, और अपना सारा समय अपने बच्चों के साथ घर पर ही व्यतीत किया करती थीं, जो उन्हें बहुत ही प्यार और उनका आदर करते थे। एक शान्ति से कहा गया सौम्य

*सोवियत संघ के खात्मे के बाद पूँजीपतियों की सरकार ने इसे फिर से सिमब्रिस्क कर दिया।
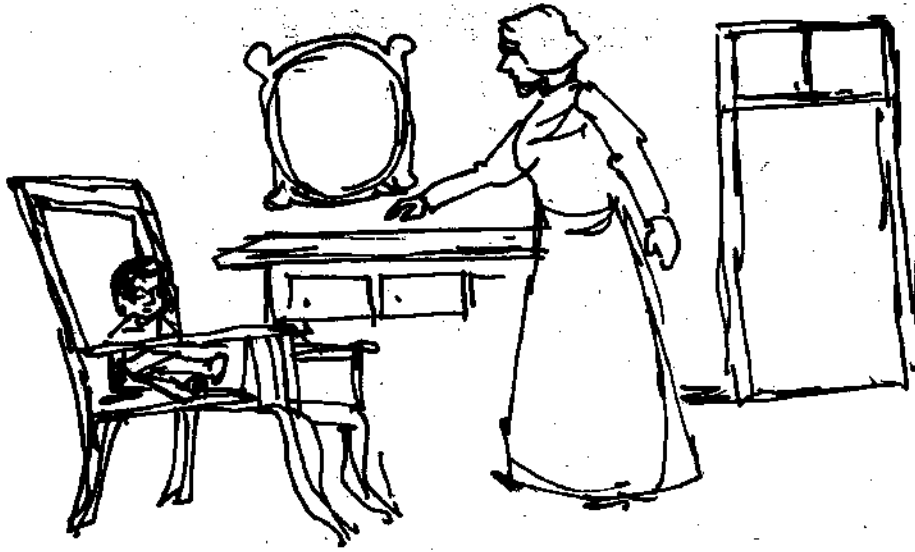
सा शब्द ही उन पर नियंत्रण रखने के लिए काफी होता था। अपनी पत्नी की तरह इल्या निकोलायविच भी, अपने परिवार के साथ अपना खाली समय व्यतीत करने को प्राथमिकता देते, बच्चों को पढ़ाते, उनके खेलों में शामिल होते या उनको कोई कहानी सुनाते।

यह एक घनिष्टता से बँधा हुआ परिवार था जिसमें व्लादिमीर बड़े हुए। वे तीसरे बच्चे थे—फुर्तीले, प्रफुल्लित और बादामी रंग की आँखों वाले।

नन्हे व्लादिमीर और उनकी बहन ओल्या, उनसे डेढ़ साल छोटी थीं। दोनों बहुत ही प्रसन्नचित और ज़िन्दादिल बच्चे थे। वे शोर भरे एवं सक्रिय खेल पसन्द करते थे, विशेषकर व्लादिमीर, जो चारों ओर चक्कर काट रही छोटी लड़की को आदेश दिया करते थे। वे सोफे के नीचे तक उसका पीछा किया करते थे और तब आदेश देते : "बाहर आ जाओ!"

व्लादिमीर अपना आनन्द और शोर हर जगह बरकरार रखते थे और परिवार को कजान गुबेरनिया ले जाने वाली 'स्टीम बोट' भी इसका अपवाद नहीं थी।

"तुम्हें यहाँ जोर से नहीं चिल्लाना चाहिए," माँ ने उनसे कहा।

"पर जहाज भी जोर से चिल्ला रहा है।" व्लादिमीर ने बगैर किसी हिचकिचाहट के उत्तर दिया, अपनी अत्यन्त तेज आवाज़ में।

जब भी व्लादिमीर और ओल्या शैतानी करते थे, माँ उनको पिता के अध्ययन कक्ष में ले जाती थीं और आरामकुर्सी पर बैठा कर चुप करवा देती थीं—"काली आरामकुर्सी" वे इसे कहते थे। उन्हें इस पर से उठने की अथवा खेलने जाने की इजाजत नहीं थी जब तक कि माँ उन्हें ऐसा करने को न कहे। एक दिन व्लादिमीर को "काली आरामकुर्सी" पर बैठा दिया गया। माँ को बाहर से पुकारा गया और वे इस सबके बारे में भूल गईं, पर अचानक उन्हें याद आया कि उन्होंने उनकी आवाज़ बहुत लम्बे समय से नहीं सुनी थी, उन्होंने अध्ययन कक्ष में देखा और वह वहाँ "काली आरामकुर्सी" पर सो रहे थे।

वह अपने खिलौनों से मुश्किल से ही खेलते थे, ज्यादातर उन्हें तोड़ देते थे। जब हम बड़े बच्चे उन्हें रोकने की कोशिश करते तो वे कभी-कभी हमसे छिप जाया करते थे, मुझे उनके एक जन्मदिन पर उनकी नर्स द्वारा उन्हें 'पेपर-मैशे' (कागज की लुगदी—अनु.) का 'त्रोइका (घोड़ा) दिये जाने के बाद उनका गायब हो जाना याद है। जल्दी से की गयी एक खोज से उन्हें दरवाजे के पीछे खड़ा पाया गया, घोड़े की टाँगों को शान्तिपूर्ण एकाग्रता से मरोड़ते हुए, जब तक वे एक के बाद एक टूट कर नहीं गिर पड़ीं।

कविताएँ

काले मेघा

काले मेघा आजा रे
सारे नभ पर छाजा रे
राह देखते थक गईं अँखियाँ
आकुल व्याकुल कटे न घड़ियाँ,
अपनी भारी झोली से
थोड़ा रस टपका जा रे।

सूख गए सब ताल तलैया
कूप बावड़ी पोखर नदिया,
तरस रहे हैं नव जीवन को
आकर ले लें इनकी बलैयाँ,
अपनी धार से भर लबालब
दे जा नई जिन्दगानी रे।

धधक रही है कब से धरती
जलती ज्वाला सी है सुलगती,
तन पर इसके फटी बिवाई
तू क्यों ना समझे पीर पराई,
भिगो के इसका पूरा बदन
उड़ा जा चूनर धानी रे।
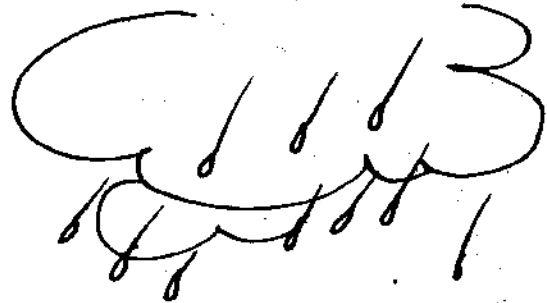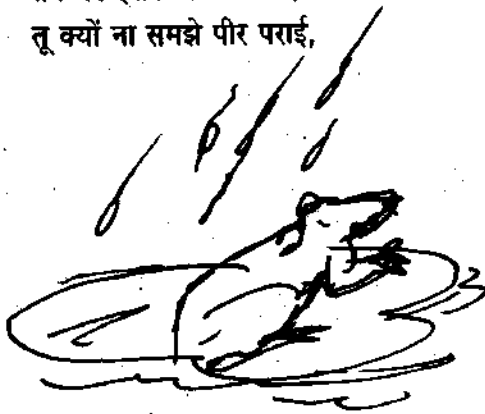
गर्म हवाएँ तन झुलसाएँ
घर से बाहर सिर भन्नाएँ,
टप-टप टप-टप चुए पसीना
बेचैनी में धड़के सीना,
बहा के ठण्डी पवन जरा तू
दे जा साँझ सुहानी रे।

धुले-धुले पत्ते सब चमकें
झूम-झूम कर डालें मचले,
नीड़ों से आ पक्षी फुदकें,
उनके नन्हे बच्चे चहकें,
गुन-गुन गाएँ और इतराएँ
दे उनको मीठी वाणी रे।

नजर बचा कर मम्मी की
हम भी पहुँचे अम्बर नीचे,
मृग छौनों से कूदें फाँदें
छप छप छईंया करते भागें,
जरा डरें न सर्दी जुकाम से
दे हमको वो नादानी रे।

• डॉ. रीता हजेला 'आराधना'

गर्मी और सर्दी

गर्मी बोली सर्दी बहना
लो आ गया नवम्बर माह,
बहुत कर लिया मैंने काम
ले मौसम की कुर्सी थाम,

सर्दी बोली ठीक कहा,
देख पसीना कितना बहा,
बैठ जरा तू कर विश्राम,
मैं फैलाऊँ अपना काम

लगे काँपने जब थर थर
भूल जाएँ जब लू का कहर,
रो रो पकड़े तेरे पाँव,
तभी तू आना इनके गाँव।

● डॉ. रीता हजेला 'आराधना'

मन करता है...

सरस उठा लेकर अँगड़ाई,
पर बोला, फिर ओढ़ रजाई—
"मन करता है फिर सो जाऊँ,
फिर से सपनों में खो जाऊँ,
रसगुल्ले का पेड़ लगाऊँ,
उसकी जड़ में खूब रस-भरी
रबड़ी-जैसी खाद लगाऊँ,
और साथ में भरूँ चाशनी,
रोज नियम से करूँ गुड़ाई!"
सरस उठा लेकर अँगड़ाई,
पर बोला, फिर ओढ़ रजाई—
मन करता है....

● रावेन्द्र कुमार रवि

मोबाइल चोर

• सुधा भार्गव

सुरीली मैना सुबह होते ही घोंसले में बैठी गीत गाया करती। शेरू राजा शहद जैसा मीठा स्वर सुनते ही अपनी गुफा से बाहर निकल आता और मुग्ध होकर मन ही मन उसकी तारीफ करता।

एक दिन थकी माँदी सुरीली अपने घोंसले में लौटी तभी शेरू शेर आ पहुँचा—"सुरीली, काम करते-करते देखो तो तुम्हारा चेहरा उतर गया है। क्यों न तुम मेरी गुफा में चलो। वहाँ सोने के पिंजरे में रहना। चाँदी की कटोरी में दाना चुगना। न तुम्हें वहाँ धूप सतायेगी न आँधी-तूफान। बस मुझे रोज नये-नये गाने सुनाना।"

"ना महाराज, मैं आपके साथ नहीं जा सकती। अपना घर कैसा भी हो सुख वहीं मिलता है। कहो तो गाना सुनाने आ जाया करूँगी।"

"मुझे तो सुबह उठने की आदत है तभी तुम्हारी मधुर स्वर लहरी सुनूँगा ताकि सारा दिन मेरा अच्छा बीते। मेरे दादाजी कहते थे नये दिन की शुरुआत खुशी-खुशी करो। इससे बिगड़े काम भी बनते चले जाते हैं।" शेरू ने कहा।

"इतनी जल्दी तो मैं सोकर उठती भी नहीं हूँ।" मैना चहकी।

"अच्छा एक काम करता हूँ। मैं अपना मोबाइल फोन तुम्हें दे देता हूँ। सुबह मैं तुम्हें फोन करके जगा दूँगा। पहले तुम इसमें 'ओम जय जगदीश हरे' सुनोगी उसके बाद मेरी आवाज़।"

"इसके पेट में तो जादू मंतर है। जागना भी हो जायेगा और भगवान का भजन भी। पर इसे बन्द कैसे करूँगी।" मैना ने कहा।

"इसमें हरे और लाल दो बटन हैं। लाल बटन दबाते ही मेरी आवाज़ आनी बन्द हो जायेगी। फोन की घण्टी सुनते ही हरा बटन दबाना। वह अपना काम शुरू कर देगा।" शेर ने बताया।

अब तो रोज सुरीली मैना शेरू को अपना सुरीला गाना सुनाती और बच्चों के उठने से पहले लौट आती।

मोबाइल की घण्टी बजते ही रोमियो कुत्ता भी जग जाता। लेकिन समझ न सका कि यह आवाज़ मैना के घोंसले से क्यों और कैसे आ रही है। उसने इसका भेद पाने की मन में ठान ली और घोंसले के चारों ओर चक्कर काटने शुरू कर दिये।

एक दिन मैना के बच्चों को अकेला जानकर उसने पेड़ के नीचे से आवाज़ लगाई—"फण्टू-मण्टू, देखो मैं तुम्हारा मामा आया हूँ। चलो तुम्हें लाल बाग की सैर करा लाऊँ।"

"मामा अभी हम मोबाइल पर खेल खेल रहे हैं। क्या तुमने हमारा भानुमती का पिटारा देखा है।" फण्टू शान से बोला।

"तुमने हमें दिखाया ही नहीं। हम क्या जानें।" चालाक रोमियो ने कहा।

मण्टू ने एक डाल पर बैठकर रोमियो मामा को मोबाइल दिखाते हुए कहा—"इसमें आवाजें आती हैं, घण्टियाँ बजती हैं।"

"मुझे तो कोई आवाज़ नहीं आ रही है।" रोमियो ने कहा।

"तुम तो बहुत नीचे खड़े हो। आवाज़ बहुत धीमी होती है उसे कान से लगाकर सुनना होता है।"

"एक मिनट को मुझे दे दो। मैं भी ज़रा सुनूँ, फिर मैं ऊपर की तरफ फोन उछाल दूँगा। तुम उसे लपक लेना।"

फण्टू ने फटाक से मोबाइल डाल से नीचे फेंक दिया। चालबाज रोमियो उसे लेकर उड़नछू हो गया।

अब तो फण्टू-मण्टू जोर-जोर से रोने लगे। आसपास के पक्षी चिल्ला-चिल्लाकर कहने लगे--

रोमियो फोन चोर है
जंगल में शोर है
राज दरबार में जायेंगे
सौ कोड़े लगवायेंगे।

इतने में मैना भी आ गई। बड़ी शान्ति से बोली—"तुम लोग चिन्ता न करो, कल तक फोन वापस आ जायेगा।"

"पर कैसे?" सारे पक्षी एक साथ बोले!

"तुम देखते जाओ।" मैना ने कहा।

पक्षियों की भीड़ छटने के बाद फण्टू बोला—"माँ, मुझे माफ करो। मुझसे गलती हो गई।"

"बच्चो, जिसको तुम जानते नहीं उसकी बात का भरोसा भी नहीं करना चाहिए।" सुरीली ने इतना ही कहा। उन्हें डाँटा नहीं क्योंकि वह जानती थी गलती से बच्चे सीखते हैं।

अगले दिन शेरू ने फोन किया। घण्टी की आवाज़ सुनते ही रोमियो हड़बड़ाकर उठ बैठा। उसे तो फोन न चलाना आता था न बन्द करना। खट... खट... खट तीन चार बटन दबा डाले उनमें हरा बटन भी था। आवाज़ आने पर उसने जोर से फोन कान से चिपका लिया। अकड़कर बोला—"हलो... मैं रोमियो बोल रहा हूँ, तू कौन है, इतनी जल्दी जगाने की तेरी हिम्मत कैसे हुई?"

"तेरा बाप हूँ।" शेरू गुर्रा पड़ा।

शेरू की गुर्राहट सुनकर रोमियो के पसीने छूट गये। शेरू समझ गया था कि मोबाइल चुरा लिया गया है। उसने तुरन्त लालू-गालू गदहों को बुलाया। आज्ञा हुई—"जाओ, रोमियो को पकड़कर तुरन्त मेरे पास लाओ।"

दोनों गदहे रोमियो के पास पहुँचे और बोले—"चोरी चटाक तेरा भोलूआ पटाक।"

"लालू, इस कुत्ते को कैसे राजदरबार में ले जायें। यह तो भाग जायेगा," गालू ने पूछा।

"मैं अभी अपने हाथी पहलवान को बुलाता हूँ, वह पीछे के रास्ते से आ रहा है," लालू गदहा बोला।

दोनों की बातें सुनकर पहलवान खुद ही आ गया। "बोलो, क्या करना है, किसे पछाड़ना है, किसकी धरा-पटक करनी है।"

रोमियो उसको देखकर थरथर काँपने लगा। लालू ने अच्छा मौका देखकर रोमियो की पूँछ से गालू की पूँछ बाँध दी। गालू खूब जोर से भागा और कुत्ता रोमियो पत्थरों से भरी सड़क पर घिसटने लगा?

उसके पीछे हाथी पर लालू की सवारी और सवारी के पीछे पशु-पक्षियों का झुण्ड। सबकी जबान पर एक ही बात थी—

रोमियो फोन चोर है
जंगल में तो शोर है
शेरू के दरबार में जायेंगे
गदहों से उसे पिटवाएँगे।

कुत्ते को अपनी जान बचानी मुश्किल हो गई। वह शेरू के पैरों में पड़ गया—"महाराजं, क्षमा करें। मुझे नहीं मालूम था कि यह मोबाइल फोन मेरी पोलपट्टी खोल देगा।"

"तुम जब भी गलत कार्य करोगे उसका नतीजा तो बुरा होगा ही। सुरीली को उसका फोन वापस करो।"

"लालू-गालू तुम दोनों ऐसी दुलत्ती झाड़ो कि इसकी बत्तीसी टूट जाए और महीनों कुछ खा न पाये।"

"हाथी पहलवान, इसको अपनी सूँड़ में लपेटकर सीधा कटघरे में बन्द कर दो। एक धमाके में सारी बदमाशी भूल जायेगा।" शेरू ने चारों को आदेश सुनाये।

"आपने बहुत अच्छा न्याय किया पर आपको कैसे पता लगा कि मोबाइल रोमियो के पास है।" पहलवान ने चिंघाड़ा।

"यह फोन मैंने सुरीली को दिया था ताकि उसको रोज मैं सुबह फोन करके जगा सकूँ। इसका नम्बर केवल मुझे पता है। ऐसी दशा में सुरीली किसी दूसरे को फोन नं. बता ही नहीं सकती। रोमियो की आवाज़ सुनते ही मैं ताड़ गया कि इसकी नीयत खराब हो गई है।" शेरू ने बताया।

सब पक्षी शेरू के न्याय से सन्तुष्ट होकर लौट गये और मन ही मन कसमें खाईं कि वे भूलकर भी चोरी जैसे बुरे कार्य नहीं करेंगे।

कहानी

पृथ्वी-दिवस कैसे मना

23 अप्रैल का दिन था। भल्लू और रोली अपनी कक्षा के अन्य टेडीबियरों के साथ 'पृथ्वी दिवस' मनाने आए थे। खुले आकाश के नीचे, सुन्दर झील के किनारे सैर करते हुए, अपने टीचर से बातें करते चलना उन्हें बहुत अच्छा लग रहा था। टीचर मिस्टर ब्राउन ने पूछा, 'यह पृथ्वी किसकी है?' सारे बच्चे एक साथ चीखे, 'हमारी।' मिस्टर ब्राउन ने फिर पूछा, 'तुम्हारी क्यों है?' इसपर रोली बोली, 'क्योंकि हम इसमें रहते हैं।' भल्लू बोला, 'क्योंकि हम इसमें सैर करने दूर-दूर तक जाते हैं।' पोली बोली, 'हम इसके पेड़ों पर चढ़ते हैं।' बूला बोला, 'क्योंकि हम इसके हवा, पानी और मिट्टी सभी कुछ इस्तेमाल करते हैं, इसलिये यह हमारी है।' टीचर जी बच्चों के जवाब से खुश हो गए। बोले, 'हाँ बच्चो, अब बताओ कि क्या तुम अपनी पृथ्वी से प्यार करते हो?' सब बच्चे एक स्वर में चिल्लाए, 'जी हाँ!' मिस्टर ब्राउन सिर हिलाकर कहने लगे, 'ऐसे नहीं, तुम्हें प्रमाण देना होगा।' बच्चे आश्चर्य से एक दूसरे का मुँह देखने लगे 'प्रमाण?' टीचर जी बोले, 'हाँ, जिससे मुझे पृथ्वी के प्रति तुम्हारे प्यार का पता चले।' भल्लू बोला, 'मैं पृथ्वी पर हरे भरे पौधे लगाता हूँ।' रोली बोली, 'मैं इसके फूल बेंचती हूँ।' बल्लू बोला, 'मैं खेत सींचता हूँ।' पोली बोली, 'मैं तो इसपर लेट-लेटकर खूब आराम करती हूँ।' पोली की बात सुनकर सब दिल खोलकर हँसने लगे।

तभी रास्ते में कूड़े का एक बड़ा-सा ढेर पड़ा दिखा। सभी बच्चे नाक बन्द कर उससे दूर भागने लगे। टीचर जी ने कुदाली उठाई और जमीन खोदने लगे। बच्चे भी उनकी मदद करने लगे। गड्ढा खुद जाने के बाद टीचर जी ने कूड़ा गड्ढे में डालना शुरू कर दिया। कुछ बच्चे कूड़ा नदी में डालने लगे। टीचर जी बोले, 'नहीं नहीं! कूड़ा पानी में डालोगे तो क्या होगा?'

टीचर जी ने बताया, 'कूड़े को हम मिट्टी से दबा देंगे। अन्दर ही अन्दर गलकर कूड़ा खाद बन जाएगा। जिससे हमारी पृथ्वी उपजाऊ बन जाएगी। बच्चे बोले, 'उपजाऊ क्या होता है?' टीचर जी ने समझाया, 'उपजाऊ मिट्टी में पेड़-पौधों का भोजन भरा रहता है।' पोली ने पूछा, 'मैं उपजाऊ मिट्टी खा लूँ?' बल्लू बोला, 'हाँ हाँ।' और उसे मिट्टी उठाकर देने लगा। बच्चे यह देखकर मुँह दबाकर हँसने लगे। इसपर टीचर जी बोले, 'नहीं, हम सब प्राणी अलग-अलग प्रकार के भोजन खाते हैं। पौधे मिट्टी में घुला भोजन जड़ से खींचते हैं।' 'पेड़-पौधे भी प्राणी होते हैं?' भल्लू ने बिना एक पल गँवाए पूछा। 'हाँ, वे भी साँस लेते हैं। बस बोल नहीं सकते।' मिस्टर ब्राउन बोले। 'और चल भी नहीं सकते' बच्चों ने जोड़ा। 'मिट्टी से खाना खाकर पौधे जब बड़े हो जाते हैं, तो हम सब के लिए धूप
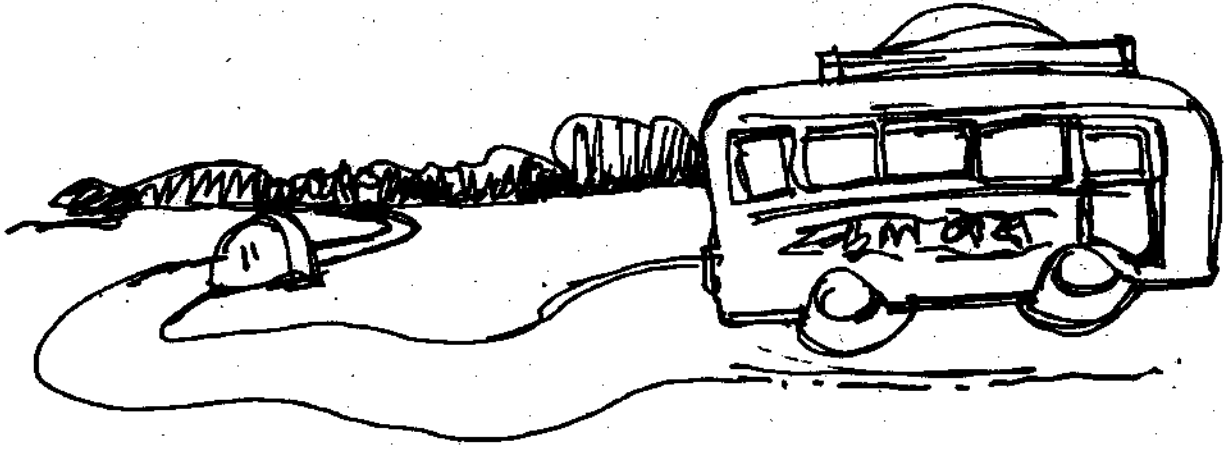
में खाना बनाने लगते हैं। बढ़िया-बढ़िया फल, अनाज और सब्जियाँ' मिस्टर ब्राउन ने आगे बताया। 'मैं तो अपनी मम्मी के हाथ का बना खाना खाती हूँ।' पोली बोली। टीचर जी बोले, 'तुम्हारी मम्मी पेड़-पौधों के बनाए वही खाने पकाती हैं, जो हम कच्चे नहीं पचा पाते।' बच्चे एक स्वर में पूछने लगे, 'हम खाना क्यों नहीं बना पाते?' टीचर जी ने बच्चों को समझाया, 'प्रकृति में केवल हरे पौधों को ही ये शक्ति दी है। धूप से खाना बनाने की। परन्तु अब धूप में से यूवी किरणें बरसने लगी हैं। जो हम सबको झुलसा कर रोगी कर रही हैं। अतः अब हमें पौधों के साथ-साथ अपनी भी देखभाल करनी होगी।' यह सुनकर पोली ने जल्दी से छाता लगा लिया। और सारे बच्चे पेड़ की छाँव में सरक गए। रोली पेड़ को बाहों में भरकर बोली, 'यह बेचारा किसकी छाँव में रहेगा?' बल्लू बोला, 'अरे! यदि यह छाँव में रहेगा तो खाना कैसे बनाएगा।' तब मिस्टर ब्राउन ने बताया, 'पृथ्वी के ऊपर ओजोन का छाता लगा है। ओजोन यानी ऑक्सीजन के तीन परमाणुओं वाली हवा। जो पृथ्वी के ऊपर फैली वातावरण की दूसरी परत स्ट्रैटोस्फियर में रहती है। ये इन खतरनाक किरणों के सिवा बाकी सारी अच्छी धूप पृथ्वी पर आने देती है।' भल्लू ने पूछा, 'अब क्या इस छाते में छेद हो गए हैं?' मिस्टर ब्राउन बोले, 'तुमने बिल्कुल ठीक समझा। हम गलती से इस छाते में ऐसे प्रदूषक डाल रहे हैं जो ओजोन का एक परमाणु तोड़ देते हैं।' बालू ने पूछा, 'ओजोन को बचाने के लिए हमें क्या करना होगा?' 'हमें अपनी नदियाँ और वातावरण स्वच्छ रखना होगा। पेड़-पौधे लगाने होंगे। उनकी अच्छी देखभाल करनी होगी। ताकि रोग रोगाणु और प्रदूषक न जन्में। और हमें साफ हवा, पानी और भोजन मिल सके। ताकि हम और हमारी पृथ्वी स्वस्थ होकर एक साथ हँसें खिलखिलाएँ। इतना कहकर टीचर जी ने बच्चों को खेलने-कूदने, पेड़ से फल तोड़ने और नदी में तैरने आदि मस्ती करने की छुट्टी दे दी।

'पृथ्वी दिवस' मनाकर लौटते समय बच्चों ने बस में पूछा, 'सर हम फिर कब यहाँ आएँगें?' टीचर बोले, 'जल्दी ही, यानी 5 जून के दिन। उस दिन तो हमारी छुट्टियाँ होंगी। हम मम्मी-पापा के साथ पहाड़ पर घूमने जाएँगे।' टीचर बोले, वो दिन एन्वायर्नमेण्ट-डे यानी 'पर्यावरण दिवस' कहलाता है। तुम जहाँ जाओगे वहीं पर्यावरण होगा। तुम वहीं सफाई या पौधे रोपने या उनकी दवा खाद पानी का ख्याल रखने के कार्य कर सकते हो। हम फिर 'ओजोन-डे' यानी 16 सितम्बर को यहाँ आ सकते हैं। तुम लोग उस दिन वातावरण के लिये किये गए अपने कामों की सूची मुझे सौंप देना। उस दिन हम जंगल में पेड़ों के नामों की तख्तियाँ लगाएँगे।' पोली बोली, 'मैं तो शेरों के गले में तख्तियाँ डालूँगी।' सब लोग ठहाका लगाकर हँस पड़े। और गीत गाते, हवा में उछलते घर की ओर चल पड़े।

● डॉ. अलका हर्ष 'शिवालिका'

लघु कहानियाँ

हिम्मत की कीमत

चंपक वन में रहने वाला जैकी बचपन से नहीं बोल पाता था। किसी बीमारी के कारण उसकी बोलने की शक्ति चली गई थी।

जब जंगल के दूसरे जानवर उसे 'गूँगा' कह कर उसकी खिल्ली उड़ाते तो वह बहुत दुःखी होता था। कभी-कभी तो उसकी आँखों से आँसू टपक पड़ते थे। यह देख उसके माता-पिता का भी दुःख बढ़ जाता था।

लेकिन जैकी की सुनने की शक्ति बहुत ही तेज थी। धीमी-सी आहट की आवाज़ भी उसे साफ-साफ सुनाई देती थी। पढ़ाई में भी वह सबसे आगे रहता था।

परीक्षाएँ प्रारम्भ हो गई थी इसलिए जैकी हिरण देर रात तक पढ़ता रहता था। एक दिन रात के समय वह सोने की तैयारी कर ही रहा था कि उसके कानों में एक धीमी-सी आवाज़ टकराई जो मकान के बाहर से ही आ रही थी। उसके कान चौकन्ने हो गए।

कुछ समय के लिए वह आवाज़ बन्द हो गई। जैकी अपने बिस्तर में जा लेटा। थोड़ी देर बाद ही उसे फिर वही आवाज़ सुनाई दी। लेकिन नींद के कारण उसकी आँखें बोझिल होने लगी थीं। वह सो गया। एक-सवा घण्टे बाद ही अचानक उसकी नींद खुल गई। उसे वही आवाज़ सुनाई देने लगी तो वह घबरा गया। वह उस आवाज़ के बारे में सोचने लगा तथा समझने की कोशिश करने लगा कि यह आवाज़ कहाँ से आ रही थी।

चुपचाप वह सीढ़ियाँ उतर कर उस सुनसान गली की ओर बढ़ गया। अब उसे वह आवाज़ साफ-साफ सुनाई दे रही थी।

वह समझ गया था कि कोई लुटेरा दुकान की दीवार में सेंध लगा रहा है। उसका आगे बढ़ना खतरे से खाली नहीं था। कुछ सोचकर वह चुपके-चुपके सावधानी के साथ दुकानों की ओर बढ़ा।

एक दीवार की ओट में खड़ा होकर उसने देखा कि दो लुटेरे लोमड़ सेठ मोनू बन्दर की जौहरी की दुकान की दीवार में सेंध लगा रहे थे। दीवार मजबूत होने के कारण उन्हें बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ रहा था। फिर भी अपने काम में जुटे हुए थे। अन्त में उन्हें सफलता मिल गई।

अब वे दोनों लुटेरे लोमड़ बड़े छेद के रास्ते से दुकान के भीतर घुसने लगे। वह असमंजस में पड़ गया कि अब क्या करे। गूँगा होने के कारण वह चिल्ला कर किसी को बुला भी तो नहीं सकता था।

उसने सोचा कि अगर वह यूँ ही चुपचाप खड़ा रहा तो ये लुटेरे थोड़ी ही देर में दुकान के बहुमूल्य हीरे जवाहरात व गहनें लूटकर भाग जाएँगे। खुद को असहाय स्थिति में पाकर वह बौखला उठा।

अचानक उसे एक तरकीब सूझी। उसने सड़क से दो तीन पत्थर उठा लिए और उन्हें पूरी ताकत से उन लुटेरों की ओर फेंका। एक पत्थर सेंध के कारण हुए बड़े छेद से होकर दुकान के भीतर रखे काँच के शोकेस से जा टकराया। दूसरा पत्थर एक लुटेरे लोमड़ के सिर पर जा लगा।

अचानक हुए इस हमले से लुटेरे बुरी तरह से घबरा गए। तब दूसरे लोमड़ ने अपनी पिस्तौल निकालकर एक साथ चार-पाँच गोलियाँ दाग दीं।

जैकी हिरण तुरन्त ही दुबक गया। इस कारण

गोलियों की बौछार से वह बच गया। उसकी तरकीब कामयाब हो गई।

गोलियाँ चलने की आवाज़ें सुनकर जंगल बस्ती के घरों में सो रहे जानवर घबराकर जाग गए। उनमें से कुछ साहसी जानवर अपने-अपने हथियार लेकर बाजार की ओर दौड़ पड़े। सभी ने उस दुकान को घेर लिया। यह देखकर लुटेरे लोमड़ के होश उड़ गए और वे डर के मारे लुटा सामान छोड़कर गोलियों से डराते हुए भाग खड़े हुए।

उसी समय चीकू खरगोश ने इस घटना की जानकारी मोबाइल फोन से पुलिस को दे दी। पुलिस ने रास्ते में ही भागते हुए दोनों लुटेरे लोमड़ को देख लिया और उन्हें जा दबोचा। सख्ती करने पर अन्य लूट की वारदातों के बारे में भी उन्होंने सब कुछ बता दिया। जंगल के कुख्यात लुटेरों को पकड़वाने के लिए जैकी हिरण को जंगल दिवस पर राजा शेरसिंह के हाथों दस हजार रुपये का पुरस्कार मिला तो वह फूला नहीं समाया।

● राजकुमार जैन 'राजन'

जम्बू-शम्भू दोस्त बने

विद्यालय के हर छात्र और अध्यापकों के मन में रह-रहकर एक ही सवाल उमड़ रहा था। सभी हैरान थे कि जम्बू भालू और शम्भू भालू दोस्त कैसे बने? जिन दो विद्यार्थियों की लड़ाई के कारण सभी अध्यापक तंग थे और छात्र विचलित वे अब जिगरी दोस्त कैसे बने?

चंपक वन के विद्यालय की ख्याति दूर-दूर थी। जम्बू और शम्बू भी अन्य जानवरों के साथ यहाँ पढ़ने आते थे। जम्बू यों तो अच्छा विद्यार्थी था परन्तु शम्भू सदा ही जम्बू का मजाक उड़ाता रहता। इस कारण दोनों में आए दिन झगड़ा हो जाता।

कोई भी छात्र जम्बू या शम्भू भालू का पक्ष नहीं लेता न ही उनके झगड़े में पड़ता। यदि कोई उन्हें समझाने की कोशिश भी करता तो उसकी ये पिटाई कर देते।

एक दिन घोषणा हुई कि चंपक वन सहित पड़ोस के जंगल के चारों विद्यालयों के पन्द्रह-पन्द्रह छात्र ट्रेकिंग पर जाएँगे। कल कोच हाथी दादा ट्रेकिंग पर जाने वाले छात्रों का चयन करेंगे। चयनित छात्रों को पाँच दिन प्रशिक्षण दिया जाएगा।

जम्बू व शम्भू दोनों का ही चयन ट्रेकिंग के लिए हो गया था। ट्रेकिंग दल पाँच दिन बाद रवाना हुआ। ट्रेकिंग के लिए मधुबन की भव्य ऊँची पहाड़ियों को चुना गया था। मोटू हाथी, झमकू शेर, काली बकरी, मुनमुन मेमना, चिरमी भेड़िया, पीकलू हिरण, झबरा भालू सहित लगभग 60 छात्र ट्रेकिंग के लिए आये थे। सबको बहुत मज़ा आ रहा था।

कोच हाथी दादा सबको ट्रेकिंग के गुर बता रहा था व सावधानी रखने की हिदायत भी दे रहा था।

शम्भू भालू तो हमेशा इसी ताक में रहता कि जम्बू का मज़ाक उड़ाया जाए। उसने कई बार जम्बू भालू का मज़ाक उड़ाया परन्तु दूसरे विद्यालयों के छात्रों के साथ होने की वजह से वह सब कुछ सहता रहा

ट्रेकिंग के अन्तिम दिन उन्हें पहाड़ी की सबसे ऊँची चोटी पर चढ़ना था। हालाँकि मौसम बहुत अच्छा नहीं था परन्तु सभी छात्रों ने चढ़ाई शुरू कर दी।

थोड़ी ही देर बाद मौसम खराब हो गया। हवा एक दम बर्फीली थी। सब छात्र पहाड़ी से नीचे उतरने लगे। अचानक एक बड़ा-सा पत्थर लुढ़कने लगा, यह देख सभी छात्र डर गए।

अचानक जिस रस्सी को पकड़कर शम्भू नीचे उतर रहा था वह पत्थर उससे टकरा कर दूसरी ओर जा गिरा। इस तरह शम्भू भालू की रस्सी कट गई और वह पास की एक गहरी खाई में जा गिरा।

ऐसी हालत में कोई भी छात्र अपनी जान जोखिम में डालकर शम्भू भालू को ऊपर लाने का साहस नहीं कर पा रहा था।

मोटू हाथी, लम्बू जिराफ, मुनमुन मेमना, सोनू लोमड़, पीकलू हिरण आदि ने खाई में उतरने का प्रयास किया भी पर सब डरकर पीछे हट गये।

जम्बू भालू ने पहले तो सोचा कि अच्छा ही हुआ की दुश्मन खाई में गिर गया। परन्तु तुरन्त उसे अपनी माँ की बात याद आ गई, "बेटा, जब भी कोई मुसीबत में हो तो सोचो यदि वह तुम्हारा ही कोई रिश्तेदार या तुम स्वयं होते तो?"

अब हिम्मत कर जम्बू खाई की ओर बढ़ने लगा उसने नीचे पहुँचकर देखा कि शम्भू बेहोश है उसे चोट भी लगी हुई है। जम्बू ने अपने बैग से एक रस्सा निकाला और उससे शम्भू को अपनी पीठ पर कसकर बाँध दिया।

ऊपर खड़े साथियों ने भी एक मजबूत रस्सा पेड़ से बाँधकर खाई में डाल दिया। जम्बू, शम्भू को पीठ पर लिए सावधानी पूर्वक रस्सी के सहारे खाई से बाहर आ गया।

तुरन्त शम्भू को जंगल के प्रसिद्ध डॉक्टर पूसी बिल्ली के अस्पताल में भर्ती कराया गया। दो दिन बाद शम्भू को होश आया तो उसने अन्य जानवरों के साथ जम्बू को भी सामने खड़ा पाया। जम्बू अपने घर भी नहीं गया था। पूरे समय अस्पताल रहकर शम्भू की देखभाल करता रहा था।

सारी बात पता चलने पर शम्भू की आँखों से आँसू उमड़ आए। उसने जम्बू से अपने पहले के किए बरताव के लिए माफी माँगी और उसे दोस्त बना लिया। जम्बू भालू को नए साल का दोहरा तोहफा मिल गया यानी शम्भू की मित्रता और विद्यालय की ओर से बहादुरी का ईनाम।

• राजकुमार जैन 'राजन'

कविताएँ

गाड़ीवान कड़क

देखते ही सड़क
गाड़ीवान कड़क

रेत भी नहीं है
खेत भी नहीं है

गिट्टी भरी है कूट
चलेगा कैसे ऊँट
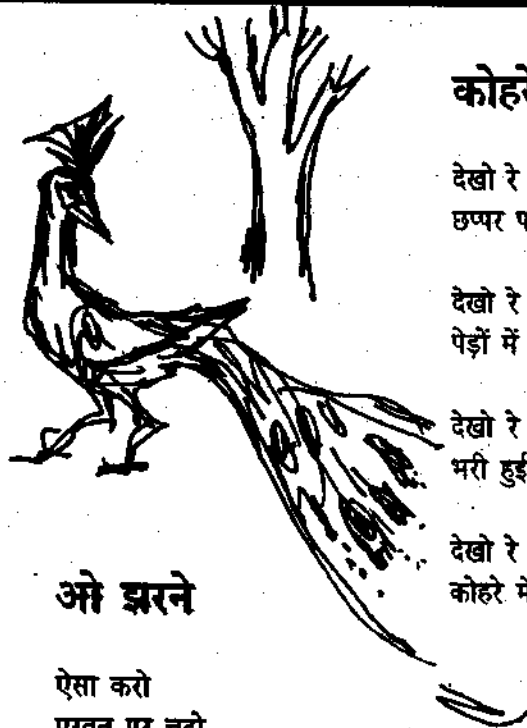
कोहरे का मोर

देखो रे जाड़े की भोर
छप्पर पर कोहरे का मोर

देखो रे लटका क्या खूब
पेड़ों में कोहरे का दूध

देखो रे नदिया की डलिया
भरी हुई कोहरे की कलियाँ

देखो रे सरसों के पात
कोहरे में डूबे दिन रात

ओ झरने

ऐसा करो
परवत पर चढ़ो
फिर नीचे उतरो
और क्या बताऊँ
तुम्हें करने
ओ झरने

अभी ढूँढ़ें झाड़ी

एक दो दस
तीतर की छूटी बस

अब जायें कैसे
इस गाँव में से

जंगल बड़ी दूर
थक के होगा चूर

कल पकड़ेंगे गाड़ी
अभी ढूँढ़ें झाड़ी
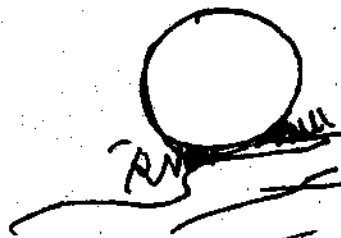
चाँद की गाड़ी

हवा की पहाड़ी
ओस की है झाड़ी
चाँदनी का फूस भरे
चाँद की है गाड़ी

घास फूल प्यारे
छू रहे हैं तारे

• प्रभात

कविताएँ

चिड़िया

एक चिड़िया को उड़ते देखा,
मैंने जब आकाश में,
लगा ऐसा जैसे कि पहुँच जाऊँगा
मैं उसके बहुत पास में।

बनाया वायुयान बैठा उसमें
करने लगा हवा से मैं बातें
हवा बोली भाई 'कवि'
क्या करने आये हो तुम मेरे पास में।

मैंने कहा बहन वायु
आया मैं चिड़िया से मिलने
उसके चटख इन्द्रधनुषी पंखों में
देखी मैंने अम्बर की छटा निराली।

मैं मिला उस चिड़िया से
पूरे दिन हमने करी बहुत सी बातें
शाम हुई तो चिड़िया बोली
चलती हूँ इससे पहले कि रात गहराये।

• विप्लव

अगर राष्ट्रपति मैं बन जाऊँ

जो बच्चों को पीटा करते
उन पापा को सजा कराऊँ।
डाँट-डाँटकर दूध पिलातीं
उन मम्मी को मजा चखाऊँ।
अगर राष्ट्रपति मैं बन जाऊँ।

गुस्से वाले मास्टर जी की
छुट्टी कर दूँ मेरा वादा।
फिर बस्ते का बोझ घटाऊँ
और घटा कर कर दूँ आधा।
दो घण्टे की लिखा, पढ़ी
और छह घण्टे का खेल कराऊँ।
अगर राष्ट्रपति मैं बन जाऊँ।

स्कूलों में होगी ऊधम
हल्ला-गुल्ला की आजादी।
लूडो, कैरम, चोर-सिपाही
व गुड्डे, गुड़िया की शादी।
साल अन्त में बिना पढ़े ही
हर बच्चे को पास कराऊँ।
अगर राष्ट्रपति मैं बन जाऊँ।

सुबह-सुबह स्कूल में सबको
बँटवाऊँ मैं बिस्कुट, टॉफी,
प्यास लगे पर पायेंगे सब
लड्डू, पेड़े, शर्बत, कॉफी।
और लंच में गरम पकौड़ा,
रसगुल्ला, या चाट खिलाऊँ।
अगर राष्ट्रपति मैं बन जाऊँ।

• अखिलेश श्रीवास्तव 'चमन'

बाल मेले का आयोजन

लुधियाना (पंजाब) 16-17 अक्टूबर 2007। 28 सितम्बर 2007 से 28 सितम्बर 2008 भगतसिंह के जन्म की सौंवी वर्षगाँठ के रूप में मनाया जा रहा है। पंजाब के लुधियाना शहर में भी इसी अवसर पर 16-17 अक्टूबर को एक 'बाल-मेला' का आयोजन किया गया।

इस मेले में खूब सारी प्रतियोगिताएँ हुईं और किताबों की प्रदर्शनी भी लगी। 'नौजवान भारत सभा' की पखोवाल इकाई के भैया लोगों ने ये मेला लगाया था। इस बाल मेले में भाषण, लेख, कविता पाठ के साथ-साथ पेंटिंग प्रतियोगिता भी हुई। भाषण और लेख प्रतियोगिता का विषय था—'शहीद भगतसिंह का जीवन, उनकी विचारधारा और आज की पीढ़ी, उनके सपनों का समाज।' कविता पाठ का विषय भी 'शहीद भगतसिंह का जीवन' ही रखा गया। पेंटिंग प्रतियोगिता में बच्चों ने क्रान्तिकारियों की तस्वीरें बनायीं। लगभग 125 बच्चों ने इस मेले में भाग लिया। सभी प्रतियोगिताओं में बच्चों की प्रतिभा और कड़ी मेहनत की झलक दिखी। सभी प्रतिभागियों को प्रोत्साहन के लिए ईनाम में किताबें दी गईं। जिसमें शिववर्मा द्वारा लिखी शहीद भगतसिंह की यादें, क्रान्तिकारियों के चुनिन्दा दस्तावेज, पहला अध्यापक, और देव पुरुष हार गए..., लाखी, मिट्टी से मनुष्य तक, कविताएँ और कहानियों की किताबें शामिल की गईं।

यह एक अलग तरह का मेला था, जिसमें बच्चों ने खेल-खेल में बहुत-सी बातें सीखीं और अपने देश के क्रान्तिकारियों के बारे में जाना, उनके सपनों के बारे में जाना। क्रान्तिकारी चाहते थे कि जब देश आज़ाद हो तो अंग्रेज तो जाये ही साथ ग़रीबी, बीमारी, लूट और शोषण से भी हमारा देश आज़ाद हो। लेकिन शहीदों के सपने अभी पूरे नहीं हो पाये हैं।

बच्चों ने अपने लेखों और भाषणों में कहा कि 1947 में जो नेता देश पर शासन करने लगे वो लुटेरे थे। क्रान्तिकारियों ने पहले ही उनके बारे में देशवासियों को सावधान किया था कि ये मेहनत करने वालों की कमाई लूटने वाले पूँजीपतियों के साथ हैं। ये सिर्फ पूँजीपतियों की आज़ादी की लड़ाई लड़ रहे थे। क्रान्तिकारियों की तरह यह मेहनत करने वालों के लिए नहीं लड़ रहे थे। ये नेता नहीं चाहते थे कि इन बातों को सब लोग ज़ानें, इसीलिए ये लोग शहीदों की मूर्तियों पर फूल-माला तो चढ़ाते हैं लेकिन वे क्या चाहते थे, इस बात को दबाने की कोशिश करते हैं। शहीद भगतसिंह और उनके साथियों का सपना था कि आज़ाद भारत में मेहनत करने वालों का राज हो और ऐसा पूँजीपतियों को हराकर ही हो सकता है।

मेले में मुख्य अतिथि के तौर पर पंजाबी के सुप्रसिद्ध कवि जसवन्त जफ़र शामिल हुए। उन्होंने अपने भाषण के दौरान कहा कि बच्चों को अपनी क्रान्तिकारी विरासत से परिचित करवाने के लिए नौभास का यह कदम सराहनीय है। राजविन्दर और अजय पाल ने भी बच्चों को सम्बोधित किया।

मेले की तैयारी के दौरान भारी संख्या में पर्चे बाँटे गये। कई स्कूलों में जाकर नौभास के लोगों ने बच्चों को शहीदों के जीवन और उनके विचारों के बारे में बताया।

आज जब टी.वी., अखबार और फिल्में हमें जादू-टोना, भूत-प्रेत और सुपर हीरो की दुनिया में घुमा रहे हैं, ऐसे में इस मेले का आयोजन अपने असली नायकों के जीवन और सपनों से परिचय कराने की एक अच्छी पहल थी।

बिन पुस्तक जीवन ऐसा
बिन खिड़की घर हो जैसा

अनुराग बाल पुस्तकालय

मनोरंजक, ज्ञानवर्द्धक, उत्कृष्ट पुस्तकों का संग्रह, कला, साहित्य, संस्कृति, विज्ञान, खेलों आदि पर रोचक किताबें और पत्र-पत्रिकाएँ, प्रेरक जीवनियाँ, देश-विदेश का चुनिन्दा बढ़िया साहित्य

सोमवार से शनिवार, शाम तीन से सात बजे तक
डी-68, निरालानगर, (गोमती मोटर्स के सामने) लखनऊ-226020

अनुराग ट्रस्ट

अनुराग ट्रस्ट की दिलचस्प किताबें पढ़ो!

आश्चर्यलोक में एलिस	सर्वान्तेस	20.00
जिन्दगी से प्यार	जैक लण्डन	25.00
हरामी	मिखाईल शोलोखोव	25.00
झाँसी की रानी लक्ष्मी बाई (नाटक)	वृन्दावनलाल वर्मा	25.00
गुल्ली-डण्डा	प्रेमचन्द	15.00
रामलीला	प्रेमचन्द	15.00
लॉटरी	प्रेमचन्द	20.00
तोता	रवीन्द्रनाथ टैगोर	15.00
पोस्टमास्टर	रवीन्द्रनाथ टैगोर	15.00
काबलीवाला	रवीन्द्रनाथ टैगोर	15.00
बहादुर	अमरकान्त	10.00
बुन्नू की परीक्षा	शस्या हर्ष	25.00
मनमानी के मजे	सेर्गेई मिखालोव	15.00
कंगूरे वाले मकान की रहस्यम मामला	होल्गर पुक्क	08.00
कोहकाफ़ का बन्दी	लेव तोल्सतोय	15.00
आम जिन्दगी के मजेदार कहानियाँ	होल्गर पुक्क	10.00
बेझिन चरागाह	इवान तुर्गनेव	12.00
लाखी	अन्तोन चेखव	12.00
हिरनौटा	दमीत्री मामिन सिदीर्याक	10.00
बस एक याद	लेओनिद अन्द्रेयेव	10.00
मदारी	अलेक्सान्द्र कुप्रिन	15.00
पराए घोंसले में	फ्योदोर दोस्तायेव्स्की	10.00

अनुराग ट्रस्ट के सभी प्रकाशनों के मुख्य वितरक — जनचेतना, डी-68, निरालानगर, लखनऊ-226020
जनचेतना, सी—74, एस. एफ. एस. फ्लैट्स, सेक्टर—19, रोहिणी, दिल्ली—110085
जनचेतना, जाफरा बाजार, गोरखपुर-273001